भारत और वैश्विक अर्थव्यवस्था

14
अध्याय

भारत के सन्दर्भ में पिछले दशक की सबसे बड़ी घटना इसके वैश्विक परिदृश्य में उभरना है। भारतीय अर्थव्यवस्था अस्सी के प्रारम्भिक दशक से निम्न विकास दर की बेड़ियों से मुक्त हुई है। नब्बे के दशक के मध्य तक, 1991-3 के आर्थिक सुधारों के परिणामस्वरूप, भारत ने वैश्विक अर्थव्यवस्था में कुछ महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करने वाले देश के रूप में अपनी पहचान बनानी प्रारम्भ की है। तत्पश्चात् नब्बे के दशक के अन्त में पूर्वी एशियाई संकट के परिणामस्वरूप और 21वीं सदी के पहले दशक के प्रारम्भिक वर्षों से भारत ने पीछे मुड़कर नहीं देखा। भारत का निर्यात बढ़ने लगा, इसका विदेशी मुद्रा भण्डार जो कई दशकों से लगभग 5 बिलियन डालर के आसपास रहा, उसमें आर्थिक सुधारों के बाद अधिकाधिक बढ़ोतरी होती गयी और एक दशक से कम समयावधि में यह बढ़कर 300 बिलियन डालर हो गया। भारतीय उद्योगपति जिन्होंने कभी-कभार भारत से बाहर जाने का जोखिम उठाया, वे अचानक सम्पूर्ण विश्व में और यहां तक कि कुछ औद्योगिक देशों में निवेश करने लगे। जब 2009 में समूह 20 के समूह [जी-20] को नेताओं के मंच स्तर तक बढ़ाया तो भारत उस वैश्विक नीति समूह का महत्वपूर्ण सदस्य था।

14.2 भारत के उदारीकरण से नए अवसर सामने आए लेकिन इससे नई चुनौतियां तथा दायित्व भी पैदा हुए। इसका अभिप्राय है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था को अब केवल दर्शक के नजरिए से नहीं देखा जा सकता। भारत में इसके व्यापक निहितार्थ हैं। प्रत्येक समय विश्व के किसी न किसी भाग में मुख्य वित्तीय संकट बना रहा है, इसलिए ठोस रवैया अपनाने की जरूरत है। साथ ही, भारत भी विकास दर में बढ़ोतरी तथा गिरावट का वैश्विक विकास पर प्रभाव पड़ता रहा है और भारत को इस दायित्व को गंभीरता से ग्रहण करने की जरूरत है। यह अध्याय जो आर्थिक समीक्षा में नया जोड़ा गया है, इस वास्तविकता का प्रमाण है। यह वैश्विक अर्थव्यवस्था की स्थिति की जांच करता है और भारत की उसमें स्थिति को भी दर्शाता है। यह मौजूदा वैश्विक मंदी तथा यूरोजोन संकट का विश्लेषण करता है जिसका भारत तथा नीतिगत चुनौतियों के लिए इस रूप में मायने हैं कि इन अन्तरराष्ट्रीय मामलों का देशीय परिपेक्ष्य में महत्व है। यह अध्याय जी-20 पर भी विचार करता है और इसकी भारत की बदलती वैश्विक व्यवस्था में रचनात्मक भागीदार के रूप में भी भूमिका है।

वैश्विक अर्थव्यवस्था की स्थिति

14.3 विश्व की प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में पिछले वर्ष घटित घटनाक्रम उत्साहवर्धक नहीं रहे हैं, यह आशंका है कि वैश्विक आर्थिक बहाली की प्रक्रिया जो 2008 के वित्तीय संकटबाद प्रारम्भ हुई थी, उसमें ठहराव आना प्रारम्भ हुआ है तथा यूरोजोन के क्षेत्र में सरकारी ऋण संकट कुछ समय तक बने रह सकता है। इन जोखिम क्षेत्रों से बचने के प्रयास किए गए हैं, लेकिन विश्व को इसका अनुभव कुछ कम है, इसलिए हमें इस दिशा में और प्रयास करने की जरूरत हैं। अमरीकी अर्थव्यवस्था में कुछ सुधार दिखाई दिया है लेकिन आर्थिक विकास की गति मंद रही है। वैश्विक अर्थव्यवस्था के 2012 में 3.3 प्रतिशत तक बढ़ोतरी करने की आशा है जो वर्ल्ड इकोनोमिक आउटलुक (डब्ल्यूईओ) के अद्यतन अन्तरराष्ट्रीय मौद्रिक कोष जनवरी 2012 के अनुसार 2011 में 3.8 प्रतिशत के मुकाबले हैं। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में सकल घरेलू उत्पाद (सघउ) में बढ़ोतरी 2011 में घटकर 1.6 प्रतिशत हो गयी जबकि 2010 में यह 3.2 प्रतिशत थी और 2012 में इससे भी

सारणी 14.1 सघउ का विकास (प्रतिशत) (वर्षानुवर्ष)

	विश्व	उन्नत अर्थव्यवस्थाए	अमरीका	यूरोपीय संघ	ब्रिटेन	यूरोजोन	जर्मनी	जापान	ब्राजील	रूस	भारत	चीन	द. अफ्रीका
2010	**5.2**	**3.2**	**3.0**	**2.0**	**2.1**	**1.8**	**3.6**	**4.4**	**7.5**	**4.0**	**9.9**	**10.4**	**2.9**
तिमाही 1			2.2	1.0	1.2	1.0	2.4	5.0	9.3	3.0	9.4	11.9	1.6
तिमाही 2			3.3	2.2	2.5	2.1	4.1	4.5	8.7	5.2	8.8	10.3	3.0
तिमाही 3			3.5	2.4	3.0	2.1	4.0	5.2	7.0	3.4	8.9	9.6	3.3
तिमाही 4			3.1	2.2	1.7	2.0	3.8	3.2	5.3	4.4	8.3	9.7	3.6
2011	3.8	1.6	1.8	1.6	0.9	1.5	3.0	-0.9	2.9	4.1	7.4	9.2	3.1
तिमाही 1			2.2	2.4	1.6	2.4	4.6	0.1	4.2	3.8	7.8	9.7	3.7
तिमाही 2			1.6	1.7	0.5	1.6	2.9	-1.7	3.3	3.5	7.7	9.5	3.3
तिमाही 3			1.5	1.4	0.4	1.3	2.6	-0.6	2.2	4.9	6.9	9.1	2.9
तिमाही 4			1.6	0.9	0.7	0.7	2.0	-1.0	na	na	6.1	8.9	na
2012 (पी)	3.3	1.2	1.8	-0.1	0.6	-0.5	0.3	1.7	3.0	3.3	7.0	8.2	2.5

स्रोत: आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी)/आईएमएफ प्रमुख वैश्विक संकेतक तथा डब्ल्यूईओ

टिप्पणी: अ: जनवरी 2012 तक अद्यतन किए आईएमएफ वर्ल्ड इकोनोमिक आउटलुक से प्रक्षेपण।
उ.न.: उपलब्ध नहीं। विकास दरों का देश स्रोतों के अनुरूप होना आवश्यक नहीं है।
***कन्ट्री वेबसाइट वर्षानुवर्ष, यूःसं-यूरोपीय संघ, ब्रिक्स ब्रिक्स समूह अर्थात् ब्राजील, रूस, भारत, चीन, तथा दक्षिण अफ्रीका को व्यक्त करता है। ति$_1$, ति$_2$ ति$_3$ और ति$_4$ पहली, दूसरी, तीसरी तरफ चौथी तिमाही को व्यक्त करता है।**
#भारत की सघउ विकास कारक लागत के संदर्भ में है जबकि अन्य देशों के मामले में यह बाजार कीमतों पर है।

घटकर इसके 1.2 प्रतिशत पर पहुंचने की आशा है। उभरती अर्थव्यवस्थाओं में विकास दर 2011 में घटकर 6.2 प्रतिशत हो गयी जबकि 2010 में यह 7.3 प्रतिशत थी तथा इसके 2012 में 5.4 प्रतिशत होने का अनुमान है। अमरीकी अर्थव्यवस्था में कुछ हद तक सुधार दिखायी दिया है और इसके 2012 में विकासदर 1.8 प्रतिशत पर बने रहने का अनुमान है। फिर भी, अमरीका की आर्थिक विकास दर राजकोषीय तथा मौद्रिक नीति दोनों उपायों का व्यापक उपयोग करने के बावजूद मंद रही है। यूरोजोन के 2012 में 0.5 प्रतिशत तक बने रहने की आशा है (सारणी 14.1)।

14.4 इस समय उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में घटते विकास का मुख्य कारण सरकारी ऋण संकट है जो यूरो जोन की अर्थव्यवस्थाओं में प्रारम्भ हुआ लेकिन 2011 के उत्तरार्द्ध से इसने प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालना प्रारम्भ किया (देखें बॉक्स 14.1)। मध्यावधि राजकोषीय समेकन से सम्बद्ध मुद्दों, सार्वजनिक तथा निजी ऋण सम्बन्धी यूरोपीय बैंकों का प्रकटन तथा संकट समाधान के मार्ग पर आवर्ती मतभेद से वैश्विक परिदृश्य पर निरन्तर विचार करना जरूरी है चूंकि यूरो जोन की वैश्विक सघउ में लगभग पांचवे हिस्से की भागीदारी है।

14.5 मौद्रिक नीति विकल्पों तथा उन्नत वित्तीय बाजारों में व्याप्त अन्य अनिश्चितताओं के प्रभावों के फलस्वरूप पूंजी प्रवाह में आयी तेजी ने विनिमय दरों पर प्रभाव डाला और कई उभरती अर्थव्यवस्थाओं में वृहद आर्थिक प्रबन्धन के कार्य को कठिन बताया। इसने विश्व वित्तीय संकट के बाद में उदारीकरण के नए आयाम दिए जहां सुगम मौद्रिक नीति देशों का एक समूह है जो विदेशी पूंजी प्रवाह के कारण अन्यत्र मुद्रास्फीति का परिणाम है।

14.6 सामान्य रूप में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में तथा यूरो जोन की सहवर्ती अर्थव्यवस्थाओं में बेरोजगारी की स्थिति जो वैश्विक संकट दौरान बिगड़ गयी थी, उसमें अभी सुधार नहीं दिखाई दिया है। ओईसीडी इम्प्लाइमेंट आउटलुक 2011 में यह ध्यान में आया है कि बहाली अवरुद्ध होने से ओईसीडी बेरोजगारी उच्च स्तर पर 44.5 मिलियन लोगों तक रही। बेरोजगारी की स्थिति ओईसीडी देशों में भिन्न-भिन्न रही है जबकि स्पेन ने सर्वाधिक उच्च बेरोजगारी की दर (21.77 प्रतिशत) दिखाई। ओईसीडी रिपोर्ट के अनुसार इस बेरोजगारी से सर्वाधिक प्रभावित नौजवान तथा अस्थाई कामगार रहे हैं जिनमें कुछ जॉब मार्केट से बाहर हो गए हैं। अमरीका में बेरोजगारी दर में कुछ सुधार दिखाई दिया है (2011 की तीसरी तिमाही में 9.1 प्रतिशत की तुलना में 2011 की चौथी तिमाही में 8.7 प्रतिशत लेकिन इसके बावजूद यह अधिक है। उन्नत देशों विशेषकर यूरो जोन के संकट प्रभावित देशों में बेरोजगारी की दर राजकोषीय समेकन का अन्तर्निहित विरोध (संकुचन प्रवृत्तियों को बिना विकृत किए) सहवर्ती अर्थव्यवस्थाओं में सामाजिक

बाक्स 14.1 : यूरोजोन: संकट पर संकट

यूरो जोन: यूरो जोन (17 यूरोपीय देशों का करेंसी संघ) मुख्य संकट से गुजर रहा है जो ग्रीस से प्रारम्भ हुआ लेकिन यह तेजी से आयरलैंड, पुर्तगाल तथा स्पेन और उसके बाद इटली में फैला। जबकि ग्रीस में सरकारी ऋण संकट की आशंका से यह पैदा हुआ, वहीं इसने सहवर्ती अर्थव्यवस्थाओं पर भी प्रभाव डाला, विशेष रूप से भारी वित्तीय संस्थाओं पर। इन अर्थव्यवस्थाओं (विशेष रूप से ग्रीस) ने चूक तथा उधार लागतों में बढ़ोतरी की आशंका के कारण अपने सरकारी ऋण की रेटिंग में गिरावट देखी। सरकारी ऋण संकट ने इन कुछ देशों के समक्ष पुन: वित्तपोषण सरकारी ऋण हेतु अत्यधिक कठिनाई पैदा की है। इन देशों का बैंकिंग क्षेत्र भी बुरी तरह प्रभावित हुआ है।

अनुकूल समय: यूरो प्रारम्भ करने के बाद, यूरो जोन ने न केवल दीर्घावधि ब्याज दरों में गिरावट देखी (विशेषकर 2002 से 2006), बल्कि सदस्य देशों की ब्याज दरों में तेजी से जुड़ाव देखा गया। समान करेंसी, सदृश ब्याज दरें तथा सापेक्ष रूप से ठोस विकास ने बैंकों द्वारा सरकारी और निजी ऋण की विदेशी धारिता सहित सार्वजनिक और निजी उधार में बढ़ोतरी के लिए एक आधार उपलब्ध कराया है।

ट्रिगर:

2008 में वैश्विक वित्तीय संकट के बाद, सरकारी ऋण स्तरों में बढ़ोतरी प्रारम्भ हुई। यह प्रकटन कि ग्रीस में राजकोषीय घाटा पूर्व में उल्लिखित से कहीं ज्यादा था, और जिसने ऋण के सतत बने रहने के सम्बन्ध में 2010 के प्रारम्भ में गंभीर चिन्ताओं की पूर्ति की, रेटिंग घटाने से बांड आय में उच्चक्र बढ़ोतरी हुई और पुन: इससे अन्य सहवर्ती यूरोजोन अर्थव्यवस्थाओं तथा उच्च सरकारी ऋण अथवा बैंक ऋण निर्माण अथवा दोनों में और गिरावट देखी गयी।

संकट कैसे फैला: 2010 के प्रारम्भ में संकट तीव्र हुआ जबकि सरकारी ऋण तथा बैंकों के प्रकटन की विदेशी धारिता सामने आयी। वित्तीय बाजारों ने दबावों को आगे बढ़ाया जिससे न केवल क्रेडिट डिफॉल्ट स्वैप (सीडीएस) विस्तार में तेजी से बढ़ोतरी हुई बल्कि इसने बाद में अन्यत्र पूंजी प्रवाह को प्रभावित किया।

अन्तर्निहित कमजोरियां: इस संकट को कतिपय विशिष्टताओं के कारण सुलझने में कठिनाई हुई:

- *यूरोजोन में एकल राजकोषीय प्राधिकार का अभाव है जो कठोर प्रवर्तन हेतु सक्षम है;*
- *प्रतिस्पर्द्धा के विभिन्न स्तरों वाली अर्थव्यवस्थाओं (तथा राजकोषीय स्थितियां) की एकल करेंसी है;*
- *इन अर्थव्यवस्थाओं को करेंसी के ह्रास के जरिए समायोजित नहीं किया जा सकता।*
- *अन्तिम उपाय अर्थात् पूर्ण केन्द्रीय बैंक का कोई ऋणदता नहीं है।*

संकट को सुलझाने हेतु किए गए उपाय: मई 2010 में यूरोपीय वित्त मंत्री यूरोपीय वित्तीय स्थिरता सुविधा (ईएफएसएफ) के सृजन द्वारा वित्तीय स्थिरता का सुनिश्चय करने हेतु 750 यूरो बिलियन राशि का राहत पैकेज देने पर सहमत हुए। अक्तूबर 2011 में यूरोजोन नेता कई उपायों के पैकेज पर सहमत हुए जिसमें एक वह समझौता भी शामिल है जिसके द्वारा बैंक निजी ऋणदाताओं स्वामित्व में ग्रीक ऋण के 50 प्रतिशत राशि को बट्टे खाते डालना स्वीकार करेंगे। ईएफएसएफ में लगभग 1 मिलियन यूरो को बढ़ोतरी होगी तथा यूरोपीय बैंकों से अपेक्षित होगा कि वे 9 प्रतिशत पूंजीकरण प्राप्त करें। यूरोपीय स्थिरता तंत्र के प्रारम्भ की तारीख को जुलाई 2012 से आगे ले जाया गया। यूरो में विश्वास बहाली हेतु, यूरोपीय संघ के नेता इस वचनबद्धता के साथ राजकोषीय समेकन पर सहमत हुए कि सहभागी देश संतुलित बजट संशोधन को प्रारम्भ करेंगे। दिसम्बर 2011 में, यूरोपीय सेन्ट्रल बैंक (ईसीबी) ने अत्यधिक अनुकूल दरों पर तीन वर्षीय दीर्घावधि पुन: वित्तपोषण कार्यकलाप (एलटीआरओ) भी पेशकश हेतु उपाय किए ताकि निधि पोषण का दबाव समाप्त किया जाए जिससे जनवरी तथा फरवरी 2012 दौरान कुछ हद तक आय को नीचे लाने में भी मदद की। लेकिन इन सभी उपायों की प्रभावकारिता तथा आगे संसाधन कैसे जुटाए जाएंगे, उनकी पर्याप्तता, तथा नीचे गिर रहे सरकारी ऋण स्तरों के बारे में उत्पन्न सन्देह, तथा ग्रीस और अन्य अर्थव्यवस्थाओं की आगे राजकोषीय मितव्ययिता अपनाने की क्षमता, विशेषकर कम विकास के परिप्रेक्ष्य के बारे में समग्रत: अनिश्चित बनी रही।

यूरो जोन तथा भारत: यूरो जोन यद्यपि यूरोपीय संघ से अलग है, फिर भी यूरोपीय संघ का एक गौण भाग है। यूरो जोन तथा यूरोपीय संघ की वैश्विक सघउ में, क्रमश: लगभग 19 और 25 प्रतिशत की भागीदारी है। यूरोपीय संघ भारत का मुख्य व्यापारिक भागीदार है जिसकी भारत के निर्यात में 20 प्रतिशत की भागीदारी है। साथ ही यह विदेशी प्रत्यक्ष निवेश का प्रमुख स्रोत भी है, आईएमएफ ने भविष्यवाणी की है कि यूरो जोन में 2012 में हल्की मंदी देखी जाएगी। यूरो जोन में मंदी का यूरोपीय संघ, विश्व अर्थव्यवस्था के साथ-साथ भारत पर प्रभाव पड़ने की संभावना है।

गिरावट को व्यक्त करन है तथा इसने ध्रुवीकृत सार्वजनिक बहस कराने पर जोर दिया है।

14.7 जापान में भयंकर भूकम्प तथा सुनामी (मार्च 2011) के परिणामस्वरूप 2011 में वैश्विक विकास की बहाली की समाप्ति सप्लाई चेन नेटवर्क में अवरोधों से शीर्ष पर रही। वर्ष में बाद में अक्तूबर तथा नवम्बर थाइलैंड में भयंकर बाढ़ आयी जिसने भी कुछ सप्लाई चेन में बाधा पहुंचायी। कुछ मध्यपूर्व तथा उत्तरी अफ्रीका देशों में व्याप्त राजनीतिक अनिश्चितताएं तेल की कीमतों के स्पष्ट निहितार्थों के अलावा अनिश्चितता का अन्य स्रोत रही है। यूरो जोन में व्याप्त अत्यधिक अनिश्चितता ने वैश्विक वित्तीय बाजारों पर प्रभाव डाला है जिससे दिसम्बर 2011में पूंजी विपर्यय सुरक्षित ठिकानों में हुआ।

चित्र 14.1 सघउ वृद्धि के अनुमान और पूर्वानुमान

14.8 वर्तमान में अल्पावधि में, वैश्विक अर्थव्यवस्था कई दवाओं का झेल रही है जो विभिन्न स्रोतों, आर्थिक, सामाजिक तथा भू-राजनीतिक कारणों से उत्पन्न है। 2012 में अधिकांश देशों के सम्बन्ध में कम वैश्विक विकास की भविष्यवाणी बारम्बार अनिश्चितता का ही संकेत देती है जो विभिन्न कारकों से उत्पन्न हुई है। (चित्र 14.1)

14.9 इसके बावजूद, आईएमएफ के अनुसार चीन (8.2 प्रतिशत के बाद भारत (7 प्रतिशत) को दूसरी तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था माना है। मध्यावधि में, वैश्विक अर्थव्यवस्था के समक्ष चुनौतियां यूरोफोन संकट के सुलझने तक निरन्तर बनी रहेगी। जापान तथा अमरीका में उच्च घाटा तथा ऋण एवं सामान्यत: उच्च आय देशों में मंद विकास को नहीं सुलझाया गया है, ग्लोबल आउटलुक में व्याप्त जोखिम भी भू-राजनीतिक तनावों की वजह से है जो ईरान पर केन्द्रित है और जिससे तेल आपूर्ति में व्यवधान पैदा हो सकता है और जिसके परिणामस्वरूप तेल कीमतों में तीव्र बढ़ोतरी हो सकती है और यहां तक कि सप्लाई रूट भी प्रभावित हो सकते हैं।

14.10 जबकि मौजूदा घटनाक्रम अल्पावधि से मध्यावधि में प्रत्याशित परिणामों के लिए महत्वपूर्ण है, वहां मौजूदा वैश्विक स्थिति भी कतिपय दीर्घकालिक घटनाक्रमों और मुख्य अर्थव्यवस्थाओं की सापेक्ष तिथियों में परिवर्तन का संकेत देती है जो अब सम्भवत: कतिपय महत्वपूर्ण अनुपातों तक पहुंच गयी है।

वैश्विक अर्थव्यवस्था तथा बदलता संतुलन

14.11 वैश्विक सघउ में मुख्य अर्थव्यवस्थाओं की भागीदारी विनिर्माण तथा व्यापार जैसे कुछ परम्परागत मेट्रिक्स से संकेत मिलता है कि विश्व अर्थव्यवस्था के एकाकार होने में विशेष रूप से पिछले दशक की तुलना में महत्वपूर्ण बदलाव आया है।

सारणी 14.2 : विश्व सघउ में हिस्सेदारी

	उन्नत अर्थव्यवस्थाए	अमरीका	यूरोपीय संघ	यूरोजोन	यूके	जर्मनी	जापान	ब्राजील	रूस	भारत	चीन	द. अफ्रीका
					(मौजूदा कीमतें)							
1980	76.2	26.0	34.1	उ.न.	5.1	7.7	10.0	1.5	उ.न.	1.7	1.9	0.8
1990	79.7	26.1	31.7	उ.न.	4.6	7.0	13.8	2.3	उ.न.	1.5	1.8	0.5
2000	79.7	30.9	26.4	19.4	4.6	5.9	14.5	2.0	0.8	1.5	3.7	0.4
2005	76.1	27.7	30.2	22.3	5.0	6.1	10.0	2.0	1.7	1.8	5.0	0.5
2010	65.8	23.1	25.8	19.3	3.6	5.2	8.7	3.3	2.4	2.6	9.3	0.6
					(पीपीपी आधार)							
1980	69.0	24.6	31.4	उ.न.	4.3	6.7	8.6	3.9	उ.न.	2.5	2.2	1.0
1990	69.2	24.7	28.7	उ.न.	4.1	6.2	9.9	3.3	उ.न.	3.2	3.9	0.9
2000	62.8	23.5	25.0	18.3	3.6	5.1	7.6	2.9	2.7	3.7	7.1	0.7
2005	58.6	22.3	23.0	16.5	3.4	4.4	6.8	2.8	3.0	4.3	9.5	0.7
2010	52.1	19.5	20.4	14.6	2.9	4.0	5.8	2.9	3.0	5.5	13.6	0.7

स्रोत: आईएमएफ, डब्ल्यूईओ डाटबेस

टिप्पणी : पीपीपी का तात्पर्य, क्रयशक्ति समता से है।

14.12 पिछले 20 वर्षों में कई बड़ी उभरती अर्थव्यवस्थाओं विशेष रूप से ब्रिक्स अर्थव्यवस्था में सतत विकास के फलस्वरूप वैश्विक सघउ में उनकी भागीदारी में बढ़ोतरी हुई जिससे सारणी 14.2 से देखा जा सकता है, परिणामस्वरूप, विश्व अर्थव्यवस्था में मूल्य वर्धन उन्नत देशों से उभरती अर्थव्यवस्थाओं की तरफ गया है। भागीदारी में गिरावट मुख्यत: यूरोपीय देशों के मामले में देखी गयी है। एशिया की तरफ झुकाव महत्वपूर्ण है, और एशिया के भीतर जापान से चीन तथा भारत की तरफ यह परिवर्तन देखा गया है। वैश्विक सघउ में चीन की हिस्सेदारी पांच गुना बढ़ी है और वह-विश्व में दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन गया है। भारत की भागीदारी में बढ़ोतरी यद्यपि कम शानदार है फिर भी वह पीपीपी सन्दर्भ में चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता है। (सारणी 14.2)

14.13 उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की भागीदारी में गिरावट जो एक ओर उस मंदी की वजह से तेज हुई है विशेष रूप से 2005 से अमरीका में सबप्राइम संकट, 2010 में यूरोजोन संकट तथा लगभग दो दशकों से जापान में ठहराव आ जाने की वजह से आया है तो दूसरी तरफ कम और मध्य आय वाले देशों (विशेष रूप से भारत तथा चीन जैसे बड़े देशों) में उच्च विकास दर के फलस्वरूप भी है।

14.14 इस परिप्रेक्ष्य से कि क्या कई बड़े देशों में प्रति व्यक्ति आय में 'कैच अप' (अथवा अभिसरण) रहा है, यह देखा गया है कि 131 देशों का प्रति व्यक्ति आय का मानक विचलन (पीपीपी स्थिर 2005 डालर पर) 1980 से 2009 तक अस्सी के दशक से पिछले दो-तीन वर्षों को छोड़कर अधिकांश अवधि में निरन्तर बढ़ा है (जो अतिसरण की अपेक्षा अपसरण दिखाता है। (चित्र 14.2)। इससे प्रकट होता है कि उन्नत देशों में भागीदारी मे गिरावट वे बावजूद, विकसित तथा विकासशील देशों के बीच अनौचित्य अधिकांश समयवधि हेतु बढ़ सकता है।

14.15 क्या मानक विचलन में हाल में कभी देशों की 'कैचिंग अप' प्रक्रिया (कम आय वाले देशों सहित) से जुड़ी है अथवा वित्तीय तथा आर्थिक संकट के फलस्वरूप विकसित देशों में मंदी आयी है तथा क्या यह अस्थाई दौर है, ये कुछ ऐसे मुद्दे हैं, जिन पर उसके जांच किए जाने की आवश्यकता है।

14.16 असमानता की पूर्ववर्ती दिशा अन्तरवैयक्तिक असमानता को ग्रहण नहीं करती। विश्व बैंक के ब्रान्को मिलानोविक द्वारा किए गए उपभोक्ता आंकड़ों पर आधारित अध्ययन के अनुसार, वैश्विक असमानता 50 प्रतिशत लोगों सहित काफी अधिक रही है और जिनकी 2005 में पीपीपी आधार पर विश्व आय/खपत के केवल 6.6 प्रतिशत है जबकि शीर्ष। प्रतिशत 13.4 प्रतिशत और शीर्ष 10 प्रतिशत 55 प्रतिशत से अधिक का प्रतिनिधित्व करता है।

14.17 जहां तक भारत का सम्बन्ध है, यहां अस्सी के दशक में तीव्र आर्थिक विकास हुआ। यह विकास अतीत में इसके द्वारा प्राप्त विकास से तुलना करने पर उच्च था बल्कि यह कई देशों द्वारा प्राप्त विकास की अपेक्षा भी ज्यादा था।

14.18 1980 तथा 2010 के मध्य, भारत ने 6.2 प्रतिशत की विकास दर प्राप्त की जबकि विश्व में समग्र रूप में 3. 3 प्रतिशत की विकास दर दर्ज हुई। परिणामस्वरूप, भारत का वैश्विक सघउ में भागीदारी (स्थिर 2005 पीपीपी अन्तरराष्ट्रीय डालर के सन्दर्भ में मापित) 1980 में 2.5 प्रतिशत से दोगुनी होकर 2010 में 5.5 प्रतिशत हो गयी (चित्र 14.3)। परिणामस्वरूप, भारत का रैंक प्रतिव्यक्ति सघउ में सुधार दिखायी दिया जो 1990 में 117 से 2000 में 101 तथा 2009 में 94 हो गया। 131 देशों में से किसके तुलनीय आंकड़े उपलब्ध हैं, वे सभी समय में मौजूद हैं, चीन ने इसी अवधि दौरान अपने रैंक में 127 से 74 में पहुंचकर सुधार किया।

चित्र 14.2 वैश्विक प्रति व्यक्ति आय का मानक विचलन (पीपीपी 2005 अमरीकी डालर पर आधारित)

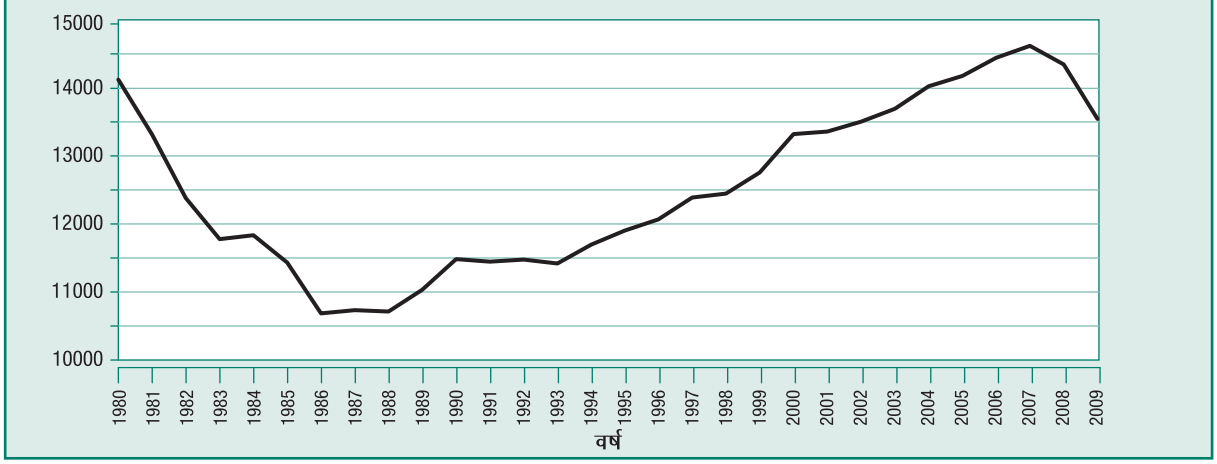

चित्र 14.3 वैश्विक सघउ में भारत की भागीदारी (स्थिर 2005 पीपीपी अन्तरराष्ट्रीय डालर)

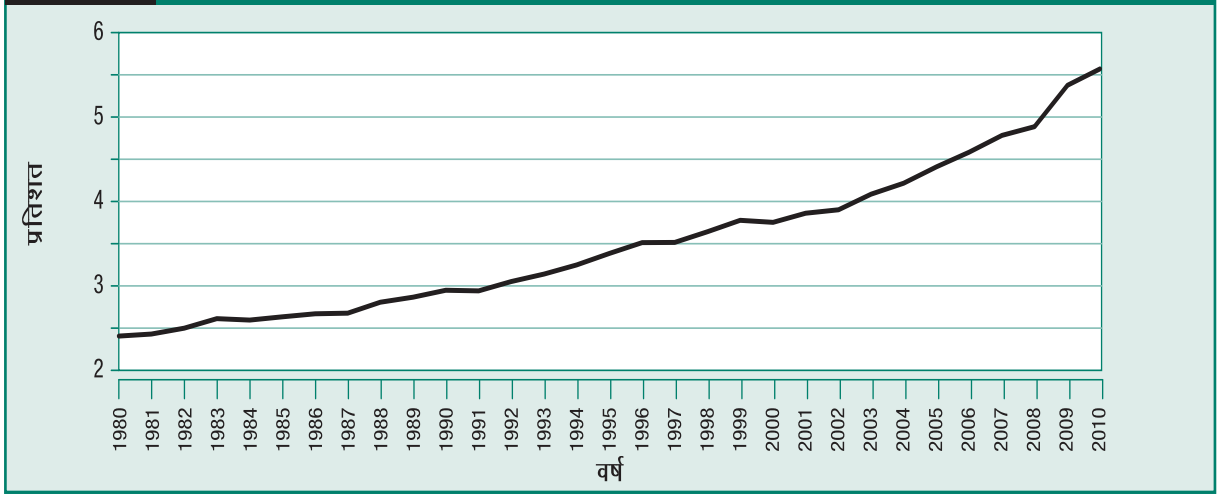

14.19 वैश्विक सघउ में उन्नत अर्थव्यवस्थों की भागीदारी में सापेक्ष कमी को देखते हुए विनिर्माण स्थिति में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखा गया है। यह प्रक्रिया नब्बे के दशक में थी लेकिन मौजूदा दशक में उसमें तेजी आयी। पुन: चीन की भागीदारी में बढ़ोतरी विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, जबकि ब्राजील, भारत, इण्डोनेशिया जैसी अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं की विश्व विनिर्माण मूल्य वर्धन में भागीदारी आगे बढ़ी है।

सारणी 14.3 : विनिर्माण मूल्यवर्धित विश्व एमवीए के प्रतिशत के रूप में (2009 में शीर्ष 15)

देश	2000	2009
1 अमरीका	25.6	18.7
2 चीन	6.7	18.1
3 जापान	18.0	10.1
4 जर्मनी	6.8	6.4
5 इटली	3.6	3.5
6 फ्रांस	3.3	2.8
7 यूके	4.0	2.4
8 रूस	na	1.7
9 ब्राजील	1.7	2.4
10 कोरिया गणराज्य	2.3	2.3
11 स्पेन	1.7	1.9
12 मेक्सिको	1.9	1.6
13 कनाडा	2.3	2.0*
14 भारत	1.1	2.1
15 इण्डोनेशिया	0.8	1.6

स्रोत: विश्व बैंक डाटाबेस।

टिप्पणियां: एमवीए चालू अमरीकी डॉलर के सन्दर्भ में विनिर्माण मूल्यवर्धित है।

14.20 सभी देशों में वैश्विक सघउ और विनिर्माण वितरण में परिवर्तन के बावजूद इस बात पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है कि उन्नत देश प्रौद्योगिकी और सेवाओं में मूल्य योजित के भण्डार होने के अलावा औद्योगिक उत्पादन के अभी भी बड़े हिस्सेदार हैं।

14.21 **वैश्विक व्यापार (निर्यात):** विनिर्माण मूल्य योजित के वितरण में कुछ सीमा तक परिवर्तन विश्व पण्य व्यापार (जिसमें अविनिर्मित उत्पाद भी शामिल है) में सम्बद्ध हिस्सों में परिलक्षित होता है। एक बार फिर, विकसित देशों की हिस्सेदारी में गिरावट और उभरती अर्थव्यवस्थाओं, विशेष रूप से चीन के महत्व में वृद्धि स्पष्ट रूप से देखी गयी। विश्व पण्य निर्यात में भारत की हिस्सेदारी 1990 के लगभग 0.5 प्रतिशत से बढ़कर 2010 में 1.5 प्रतिशत हो गयी। फिर भी भारत की हिस्सेदारी कम रही तथा निर्यातक देशों के वैश्विक क्रम में इसकी रैंक 19वीं है (सारणी 14.4)

14.22 सेवा निर्यात में भी, उच्च आय वाले देशों में गिरावट हिस्सा देखने को मिला है लेकिन उनका वैश्विक सेवा निर्यात में 79 प्रतिशत का भारी योगदान जारी रहा। चूंकि भारत ने अपनी सूचना प्रौद्योगिकी के बल पर सेवा निर्यात की अपनी हिस्सेदारी में 3.3 प्रतिशत वृद्धि दर्शायी जबकि चीन ने पहले से अब नया स्थान बनाया है और यह 4.5 प्रतिशत है (सारणी 14.5)

14.23 वित्तीय सेवाएं, विकसित अर्थव्यवस्थाओं में से कुछ और शीर्ष 10 वित्तीय केन्द्रों जिनमें ज्यादातर उन्नत बाजारों में स्थित है, में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। यह निर्यात और आयात में प्रतिबिम्बित है और भारत 2.4 प्रतिशत हिस्सेदारी के साथ वित्तीय सेवाओं के निर्यातक के रूप में और 6.7 प्रतिशत हिस्सेदारी के साथ आयातक के रुप में दस सर्वोत्कृष्ट में से

सारणी: 14.4 विश्व पण्य निर्यात में हिस्सेदारी (प्रतिशत)

वैश्विक निर्यात में हिस्सा	उन्नत अर्थव्यवस्थाए	अमरीका	यूरोपीय संघ	यूके	यूरोक्षेत्र	जर्मनी	जापान	ब्राजील	रूस	भारत	चीन	द. अफ्रीका
1980	66.3	11.1	41.5	5.4	30.8	_	6.4	1.0	_	0.4	0.9	1.3
1990	72.4	11.3	44.5	5.3	35.2	11.8	8.3	0.9	_	0.5	1.8	0.7
2000	65.7	12.1	38.0	4.4	29.7	8.5	7.4	0.9	1.6	0.7	3.9	0.5
2005	60.4	8.6	38.7	3.7	30.3	9.2	5.7	1.1	2.3	0.9	7.3	0.5
2010	54.2	8.4	33.9	2.7	26.4	8.4	5.1	1.3	2.6	1.5	10.4	0.6

स्रोत: संयुक्त राष्ट्र व्यापार और विकास सम्मेलन (यूएनसीटीएडी)

सारणी 14.5 विश्व सेवा निर्यात में हिस्सेदारी (प्रतिशत)

देश	उच्च आय	अमरीका	यूरोपियन संघ	यूके	यूरो क्षेत्र	जर्मनी	जापान	ब्राजील	रूस	भारत	चीन	द. अफ्रीका
1980	86.9	11.7	56.0	9.0	41.6	8.1	5.0	0.4	उ.न.	0.7	0.0	0.6
1990	87.8	17.0	50.7	6.6	39.7	7.3	4.8	0.4	उ.न.	0.5	0.7	0.4
2000	84.8	18.4	44.1	7.8	31.0	5.4	4.5	0.6	0.2	1.1	2.0	0.3
2010	78.8	14.3	42.9	6.3	30.5	6.3	3.7	0.8	0.6	3.3	4.5	0.4

स्रोत: विश्व बैंक डेटाबेस से परिकल्पित

है (सारणी 14.6 देखे)। सामान्यत:, आर्थिक कार्यकलापों और व्यापार के पूर्वगामी वितरण की एक स्थिति है जहां राष्ट्र उन विभिन्न मुद्दों पर अपनी स्थिति में होते है जिनकी चर्चा बड़ी अर्थव्यवस्था वैश्विक मंच पर होती है।

सारणी 14.6 : 2010 में वित्तीय सेवाओं के शीर्ष 10 निर्यातक और आयातक तथा उनकी हिस्सेदारी

निर्यातक		आयातक	
यूरोपियन संघ	53.0	यूरोपियन यूनियन	60.0
अमेरीका	23.6	अमेरीका	15.6
स्वीज़रलैंड	6.4	भारत	6.7
हांगकांग	5.1	कनाडा	3.6
सिंगापुर	4.9	हांगकांग	3.5
जापान	1.5	जापान	3.1
भारत	2.4	सिंगापुर	2.3
कनाडा	1.3	स्वीज़रलैंड	1.7
कोरिया	1.2	ब्राजील	1.7
नार्वे	0.6	रूस	1.7
शीर्ष 10	100.0	सर्वाच्च 10	100.0

स्रोत: विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ)

14.24 **जनसांख्यिकी** श्रमबल और आर्थिक उत्पादकता आकार ग्रहण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है तथा जनसांख्यिकी संरचना आर्थिक वृद्धि से संबंधित है। 1980 के दशक की तुलना में यह स्पष्ट है कि काफी उन्नत देशाों में कुशल जनसंख्या है। समकालीन, वैश्विक सघउ में उनकी हिस्सेदारी संगत सन्दर्भों में घट रही है (सारणी 14.7)

14.25 जनसांख्यिकी के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण होने वाला अन्य आयाम है—अन्तरराष्ट्रीय प्रवासन। सं॰रा॰सं॰ जनसंख्या प्रभाग के अनुसार 2010 में विश्व जनसंख्या 6.9 बिलियन में से 214 मिलियन या 3.1 प्रतिशत अन्तरराष्ट्रीय प्रवासी थे। जो अभी तक सुज्ञात नहीं है, तथ्य है कि दक्षिण-दक्षिण प्रवासन भी महत्वपूर्ण हो रहा है।

14.26 बिना अन्तरराष्ट्रीय प्रवासन के विकसित देशों में कार्यकारी जनसंख्या (सं॰रा॰सं॰ के वर्गीकरण के अनुसार आयु समूह 20-64 वर्ष के व्यक्ति) उस आयु समूह में जनसंख्या 77 बिलियन या लगभग 11 प्रतिशत घट जाएगी। यह विकसित देशों की अन्तरराष्ट्रीय प्रवासियों अथवा आउटसोर्सिंग कार्य पर निर्भरता बढ़ा सकेगी। इस संकटकाल में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के दोनों स्तरों पर अन्तर्निहित विरोध है जो वृद्धि की वापसी को अधिक चुनौतिपूर्ण बना सकता है। भारत जैसी अर्थव्यवस्थाओं में कामकाजी आयु वर्ग जनसंख्या के बड़े भाग की उपलब्धता से आर्थिक वृद्धि संचालन में केन्द्रीय भूमिका निभाने की संभावना है। जैसे ही निर्भरता घटती है,

सारणी 14.7 : विश्व जनसंख्या हिस्सेदारी

	ओईसीडी	यूएस	यूरोप	यूके	जर्मनी	जापान	ब्राजील	रूस	भारत	चीन	द. अफ्रीका
1980	22.2	5.1	10.4	1.3	1.8	2.6	2.7	3.1	15.5	22.1	0.6
1990	20.2	4.7	9.0	1.1	1.5	2.3	2.8	2.8	16.1	21.5	0.7
2000	19.0	4.6	8.0	1.0	1.4	2.1	2.9	2.4	16.7	20.8	0.7
2005	18.5	4.6	7.6	0.9	1.3	2.0	2.9	2.2	16.9	20.2	0.7
2010	18.1	4.5	7.3	0.9	1.2	1.9	2.8	2.1	17.1	19.6	0.7
	कुल निर्भरता अनुपात (आयु 0-14 और 65+ प्रति 100 जनसंख्या 15-64 जनसंख्या का अनुपात)										
	विश्व	यूएस	यूरोप	यूके	जर्मनी	जापान	ब्राजील	रूस	भारत	चीन	द. अफ्रीका
1980	70.3	51.2	52.8	56.1	51.7	48.4	72.4	46.8	75.9	68.5	80.7
1990	63.8	52.0	49.7	53.2	44.7	43.4	65.6	49.6	71.7	51.4	72.8
2000	59.0	51.0	47.8	53.4	47.0	46.6	54.0	44.1	63.8	48.1	59.6
2005	55.0	48.9	46.6	51.3	49.9	50.7	51.0	40.5	59.1	41.7	55.8
2010	52.4	49.6	46.2	51.4	51.2	56.4	48.0	38.6	55.1	38.2	53.3
	वृद्धावस्था निर्भरता अनुपात (आयु 65+ प्रति 100 जनसंख्या 15-64 जनसंख्या का अनुपात)										
	विश्व	यूएस	यूरोप	यूके	जर्मनी	जापान	ब्राजील	रूस	भारत	चीन	द. अफ्रीका
1980	10.1	17.1	18.9	23.3	23.7	13.4	6.9	15.0	6.3	8.7	5.6
1990	10.2	19.0	19.1	24.1	21.5	17.1	7.4	15.3	6.5	9.0	5.5
2000	10.9	18.7	21.8	24.3	24.0	25.2	8.5	17.9	6.9	10.4	5.9
2005	11.3	18.4	23.3	24.2	28.6	29.9	9.5	19.3	7.3	10.7	6.4
2010	11.6	19.5	23.7	25.1	30.8	35.5	10.4	17.7	7.6	11.3	7.1

स्रोत: संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या प्रभाग, विश्व जनसंख्या परिदृश्य 2010

जनसांख्यिकी लाभांश के सृजन के साथ आर्थिक वृद्धि प्रवृत्ति के अवसर बढ़ेंगे।

14.27 **लोक ऋण और घाटा:** चूंकि जनसांख्यिकी परिवर्तन वृद्धिशील है, अत: जनसांख्यिकी संरचना में संचयी परिवर्तन ने कई विकसित अर्थव्यवस्थाओं, विशेष तौर से यूरोप की राजकोषीय क्षमता पर टकराव शुरु हो गया है। जावक हिस्सों, में वृद्धि के साथ कई विकसित देशों में मौजूदा सामाजिक संविदाओं में विकृतियां आ गई हैं क्योंकि सार्वजनिक ऋण आपूर्ति की उनकी क्षमता घट गई तथा निजी ऋण भी बढ़ गया है। वित्तीय संकट के दौरान स्वत: स्थायीकरण कारक का सहारा उनकी राजकोषीय क्षमता में भी काम आने लगा है क्योंकि सघउ के संबंध में लोक ऋण सघउ के 100 प्रतिशत के बेंचमार्क के बिल्कुल पास या अधिक पहुंच गया तथा जापान के मामले में सघउ के भारी भरकम 220 प्रतिशत को छू गया। ध्यान देने की महत्वपूर्ण बात यह है कि बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में ज्यादातर की तुलना में भारत में आम सरकार का व्यय बहुत कम है जैसाकि राजस्व के सन्दर्भ में है (सारणी 14.8)।

सारणी 14.8 : सामान्य सरकार: राजस्व, व्यय, शेष और ऋण सघउ-2010 के प्रतिशत के रूप में

	एई	यूएस	ईयू	ईए	यू॰के॰	जर्मनी	जापान	ब्राजील	रूस	भारत	चीन	द. अफ्रीका
राजस्व	35.9	30.9	43.4	44.6	36.6	43.7	30.6	37.5	35.0	17.6	20.4	27.0
व्यय	43.3	41.3	49.8	50.6	46.8	47.0	39.8	40.4	38.5	26.0	22.7	32.0
शेष	-7.6	-10.5	-6.6	-6.3	-9.9	-4.3	-9.3	-2.8	-3.5	-8.9	-2.3	-5.1
ऋण	100.0	94.4	79.8	85.8	75.5	84.0	220.0	66.8	11.7	64.1	33.8	33.8

स्रोत: आईएमएफ, डब्ल्यू डेटाबेस; सितम्बर 2011/वित्तीय मॉनीटर 12 जनवरी तक अद्यतन

टिप्पणी: एई उन्नत अर्थव्यवस्थाएं हैं। इए यूरो क्षेत्र है।

चित्र 14.4 मौजूदा लेखा शेष (2010)

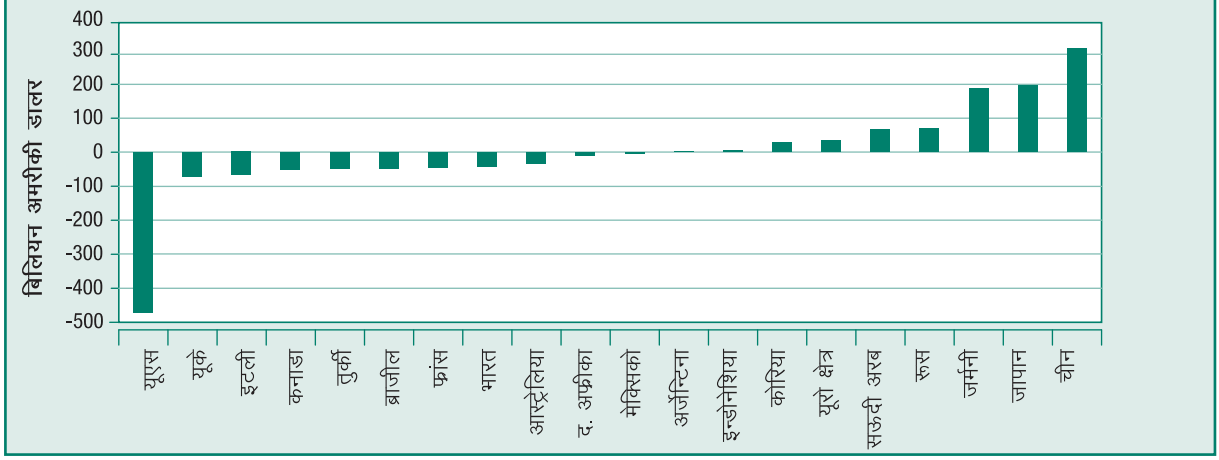

14.28 **मौजूदा लेखा शेष और प्रारक्षित भंडार:** वित्तीय संकटों की श्रृंखला विशेष तौर से 1997 के ईस्ट एशियन संकट के बाद प्रतिक्रिया स्वरुप कई उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं ने अपनी विदेशी अर्थव्यवस्था के प्रबन्धन के लिए नई कार्ययोजनाएं धारण की। इनमें निर्यातों पर अधिक निर्भरता शामिल थी। परिणामस्वरूप चालू लेखा अधिशेष हुआ तथा विदेशी विनिमय आरक्षित निधियों के संचय से मुद्रा मूल्य वृद्धि का रुकना तथा पूंजी के विपरीत प्रवाह के विरूद्ध स्वनिश्चित भी हुए।

14.29 इन कार्य योजनाओं से वित्तीय पूंजी के निवल आयातक से निवल निर्यातक में परिवर्तन हुआ। जैसाकि विकसित अर्थव्यवस्थाओं में आरक्षित निधियों में निवेश हुआ, इससे उदीयमान देशों से पूंजी प्रवाह पूंजी-संपन्न (विशेषत: अमरीका) की ओर होने का विरोधाभासी घटना घटित हुई। लेखा के सन्दर्भ में, इसे उदीयमान बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) विशेष तौर से चीन में उच्च बचत दरों के बराबर किया गया था। मुख्य जी-20 अर्थव्यवस्थाओं की चालू लेखा शेष और आरक्षित निधियों की स्थिति चित्र 14.4 और 14.5 में दिखाई गयी है। इस सम्बन्ध में भारत पर्याप्त आरक्षित निधियों के धारण में कुछ-कुछ बर्हिवासी है इसमें आवश्यक रुप से संरचनात्मक मौजूदा लेखा घाटा है तथा इसलिए पूर्ववर्ती अर्थ में वैश्विक असन्तुलनों का अंशदायक नहीं है।

14.30 आरक्षित निधियों के गुणों पर विचार किए बिना, इस बात पर अब सहमति है कि ईएमई की अपेक्षाकृत सशक्त विदेशी वित्तीय स्थिति (आरक्षित निधियां) ने उन्हें 2008 के वैश्विक संकट के चलते पूंजी विपरीत प्रवाह होने दिया तथा इसने उच्च आरक्षित निधियों को बनाए रखने की कार्य योजना की रक्षा की।

14.31 चूंकि संकट से निपटने के लिए लाभकर आरक्षित निधियों की उपयोगिता स्वीकार की गई है, अत: यह भी तर्क दिया जाता है कि अतिरिक्त आरक्षित निधियों में कम आय के अलावा लागत शामिल (अर्द्ध-राजकोषीय) है क्योंकि देश उच्च आय घरेलू निवेशों के बजाय विदेशों में निवेश करते है। इसके अलावा, विनिमय दर में बड़े उतार-चढ़ाव के परिणामस्वरूप आरक्षित निधियों के मूल्य में महत्वपूर्ण घाटा हुआ। उदाहरण के लिए यदि अमरीकी डॉलर कमजोर होता है तो डॉलर मूल्यवर्ग वाली आरक्षित निधियों की कीमत में घाटा होगा।

चित्र 14.5 विदेशी मुद्रा भण्डार (2010)

14.32 अर्थव्यवस्था की लाभकर लागतों के अलावा, चालू लेखा अधिशेष और आरक्षित निधियां के बड़े संकेतकों को वैश्विक अन्तुलनों के बड़े संकेतक और अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा प्रणाली में अस्थिरता के संभावित स्रोत के रुप में देखा गया है। वैश्विक संदर्भ में यह तर्क दिया गया है कि आरक्षित संचयन मुद्रा अधिमूल्यन रोकने का परिणाम तथा घरेलू मांग के व्यय पर निर्यातोन्मुखी उत्पादन को प्रेरणा देने का एक प्रयत्न था। महत्वपूर्ण उदीयमान चालू लेखा अधिशेष अर्थव्यवस्थाओं द्वारा आरक्षित निधि संचयन, जो मुख्यत: डॉलर परिसंपत्ति के रुप में धारित है, इसने अमरीका में चालू लेखा घाटा बढ़ने के बावजूद सशक्त अमरीकी डॉलर का समर्थन किया। विनिमय दर समायोजन को निष्फल कर यह कार्य वैश्विक आर्थिक असंतुलनों में योगदान दे रहा है।

14.33 दूसरी तरफ, यह भी तर्क दिया गया है कि आरक्षित निधियों का भंडार आरक्षित निधि मुद्रा जारीकर्ता देशों द्वारा अनुसरण की जाने वाली शिथिल मौद्रिक नीतियों का परिणाम है। बहरहाल तथ्य यह है कि विनिमय दर प्रबन्धन मुद्दा, चालू लेखा अधिशेष और आरक्षित निधियों के भंडार को पृथक नहीं देखा जा सकता तथा ये मुद्दे अन्तरराष्ट्रीय मौद्रिक और विस्तृत चर्चा से घिरे हैं। वर्तमान में, वैश्विक अर्थव्यवस्था के प्रतियोगिता हेतु चालू लेखा अधिशेष और आरक्षित निधियों के सन्दर्भ में संतुलनों में विषमता है।

14.34 बचतें और निवेश: विश्व अर्थव्यवस्था में 'न्यू नॉर्मल' की विशेषताओं में से एक उन्नत और उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं के बीच वितरित मार्ग बचतें और विनिवेश दरें है। जैसाकि चित्र 14.6 में देखा गया है, अति उन्नत अर्थव्यवस्थाओं (जो ग्राफ के बांयी ओर दिखाई पड़ती है) में सकल बचत दरें 20 प्रतिशत से नीचे है जबकि इसके विपरीत ईएमई सत्य है। निवेश प्रवृत्तियां वृद्धि संचालित करती है और बचतों में दिखने वाला विचलन निवेश दरों के लिए लगभग समान प्रदर्शित होता है। उदाहरणार्थ, भारत की निवेश दरें 1990 के मध्यदशक के सघउ के लगभग 12 प्रतिशत बिन्दू से बढ़कर 2010-11 में लगभग 35.1 प्रतिशत हो गयीं।

14.35 वैश्विक विचलन के निहितार्थ: वैश्विक अर्थव्यवस्था के संघटन में परिवर्तन पर अब तक हुई चर्चा से माल उत्पादन (विशेष तौर से विनिर्माण) के वैश्विक संतुलन में अवगम्य विचलन का संकेत मिलता है चूंकि सेवाएं (विशेष वित्तीय सेवाओं में) उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बड़े स्तर पर केन्द्रित होना जारी रही है इसलिए विश्व जनसंख्या का बड़ा हिस्सा उच्च वृद्धि के साथ जुड़ गया। इसका निहितार्थ हैं कि ईएमई और विकासशील देश माल, सेवा और जिंसों के वैश्विक बाजार में वृद्धिशील बढ़ोतरी का बढ़ना जारी रहेगा। आपूर्ति और मांग ताकतों द्वारा संचालित वैश्विक आर्थिक संतुलन में परिवर्तन इसलिए 'न्यूनॉर्मल' प्रतीत होता है और आने वाले वर्षों में यह और गम्भीर होने की संभावना है (बॉक्स 14.2 देखें)

14.36 इस अवसर पर कई उन्नत अर्थव्यवस्थाएं अपने सघउ के संबंध में निजी उपभोग और सरकारी व्यय के उच्च स्तरों के अनुकूल है। दीर्घकालिक मंदी उनके बजटीय संतुलनों और घरेलू बचतों (जो पहले से ही कम हैं) पर आगे दबाव पड़ सकता है तथा निवेश और उनकी सम्भावित वृद्धि पर विपरीत प्रभाव डाल सकता है। इस प्रकार कम वृद्धि की सम्भावना उच्च ऋण और कम वृद्धि के दुष्चक्र के समंजन से नकारी नहीं जा सकती।

14.37 इसलिए यदि उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं ने (भारत सहित) वैश्विक अर्थव्यवस्था में निश्चितता की नई पारियों के कारण 2011 में वृद्धि में मंदी दर्शाई तो सुझाव के कारण है कि इन अर्थव्यवस्थाओं में अधिकांश के वृद्धि परिदृश्य मध्यम से दीर्घावधि में सन्तुलन रहता है। यह विभिन्न कारकों के कारण है जो अधिक पारंपरिक अर्थव्यवस्था संचालक जैसे निवेश और बचतों की उच्च दरों के अलावा वृद्धि संचालित करते है जैसे घरेलू बाजार की जनसांख्यिकी और आकार।

चित्र 14.6 बचत और निवेश दरें 2011

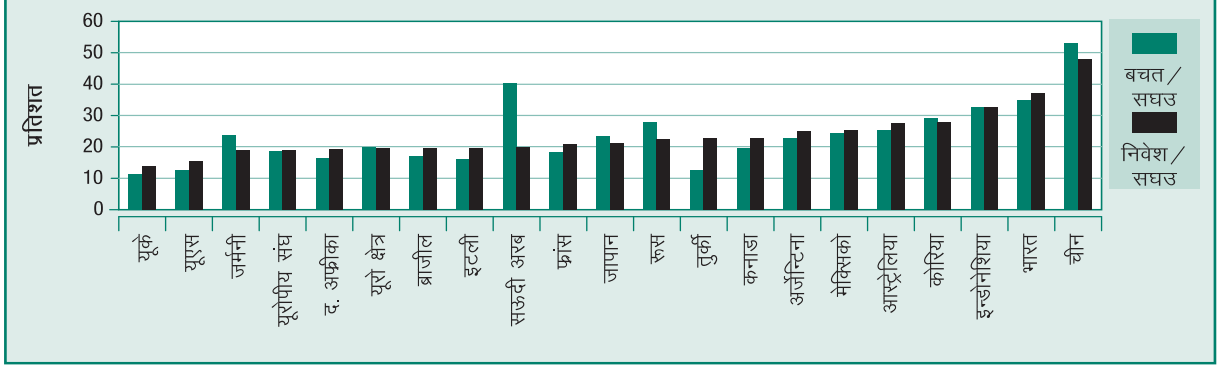

बॉक्स 14.2 : विवर्तनिक परिवर्तन

जब लघु आर्थिक संकट अपेक्षाकृत अल्पावधि में बार-बार हो तब प्रत्येक देश के नीतिनिर्माता ऐसी प्रत्येक घटना को स्वतंत्र कार्रवाई की आवश्यकता होने पर एक स्वतंत्र घटना के रुप में निपटेंगे लेकिन वास्तव में, ऐसे 'संकट समूह' वैश्विक अर्थव्यवस्था में हो रहे कुछ मूलभूत परिवर्तन के संकेत हो सकते है। इस प्रकार समूह संकट का सामना करने पर अक्सर पीछे हटना महत्वपूर्ण है और स्थिति पर सम्पूर्ण दृष्टिकोण रखना महत्वपूर्ण होता है। ऐसा ठीक-ठीक करने के लिए कुछ अनुसंधान किए गए हैं।

एक स्तर पर, यह देखना मुश्किल है कि क्या हो रहा है। दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति से तीव्र वैश्वीकरण के साथ माल, सेवाएं और पूंजी भी सभी राष्ट्रों में उन्मुक्त रुप से गतिमान होनी शुरू हो गई है। इसके अलावा और अधिक महत्त्वपूर्ण है कि सूचना प्रौद्योगिकी से यह सम्भव हुआ कि कोई व्यक्ति जिसके पास किंचित कौशल है वह एक देश में बैठे और किसी अन्य देश के लिए कार्य करे। संक्षेप में, आर्थिक प्रगति के लिए अति मूल्यवान संसाधनों में से एक है, कुशल श्रम, जो पहले अपने-अपने देशों की सीमाओं में सीमित दायरे में था, अब यह अचानक विश्व के कोने-कोने में पड़ रही आवश्यकताओं को उपलब्ध हो गया है।

इसका निहितार्थ यह है कि सभी उदीयमान अर्थव्यवस्थाएं, जिनके पास उनके कार्यस्थल को संचालित करके और अपने कामगारों को कौशल प्रदान करने की बहुत कम योग्यता है, वे भी अब अवसर का लाभ उठाने में सक्षम हैं। परिणामस्वरूप, अमरीका और यूरोप में कुशल-श्रम स्पेक्ट्रम के निचला स्तर अब भारत, चीन, फिलीपींस, इण्डोनेशिया और कई अन्य उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं के कुशल श्रम के ऊपरी स्तर के साथ प्रतिस्पर्धा में आ रहे है। इससे गरीब और अमीर देशों के बड़े निगम ऊर्जा से भर गये है और अमरीका में सिलिकॉन वैली जैसे कई क्षेत्रों में वृद्धि का कारण बना। लेकिन यह औद्योगिकीकृत राष्ट्रों और उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं दोनों में असमानता बढ़ाने का कारण भी है।

हाल ही में, एक पत्र स्पेन्स (1) ने प्रमुखता से छापा कि अमरीकी अर्थव्यवस्था में विचलन और असमानता बढ़ रही है जो वृद्धि और रोजगार प्रवृतियों के कारणों में से एक है। मुख्य उदीयमान अर्थव्यवस्थाएं अधिक प्रतिस्पर्धात्मक हो रही हैं जिसमें अमरीकी अर्थव्यवस्था ऐतिहासिक रूप से इन क्षेत्रों में प्रभावी है जैसे अर्द्ध-चालक डिजाइन और विनिर्माण, भेषज, और सूचना और प्रौद्योगिकी सेवाएं (1, पी. 29)। इसी तरह भारत और चीन में कुशल श्रम बाजारों का निचला स्तर औद्योगिकृत राष्ट्रों में अपने समकक्षों से प्रतिस्पर्धा करते है और परिणामस्वरुप इनके वेतनों में वृद्धि हो रही परिणामस्वरूप इन देशों में असमानता बढ़ रही है।

अन्य क्षेत्र भी है जहां इस तरह से अन्तरदेशीय तनाव बढ़ रहे है। सभी देशों में बचत दरों में असमानताओं से प्रायः कटुतापूर्ण वाद-विवाद हुआ और यह पहला कारण हुआ। यह सुझाया गया है (उदाहरण (2) देखें) चीन की बड़ी बचत दर चीन में घरेलू अवसंरचनात्मक कारकों के कारण सम्पूर्ण रुप से नही हो सकते लेकिन तथ्य की प्रतिक्रिया है कि अमरीका में बचत दर 1960 और 2010 के बीच तेजी से गिरी।

ये समायोजन आर्थिक खलबली और संकट को बढ़ाते है तथा इसके अलावा राजनैतिक रूप से संवेदनशील मामले है जो संरक्षणवाद की ओर ले जाते है जो अच्छाई से ज्यादा बुराई करते है। हमारे लिए यह पहचानना महत्वपूर्ण है कि इन संरचनात्मक परिवर्तनों में से कोई किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्र की कार्रवाई से न हो। कई दशकों में हुई छोटी-छोटी लाखों कार्रवाइयों और हजारों वैज्ञानिक खोजों तथा मानवीय सामान्य आविष्कार शीलता से वैश्वीकरण बढ़ा है तथा हमें वह विश्व मिला जहां आय हमारे पास है। यह हम पर निर्भर है कि हम उसे किस रूप में लें जिसे और सामूहिक निकायों का प्रयोग करें, जैसे जी-20 यह सुनिश्चित करता है कि हम संरक्षणवाद के शिकार नहीं होते है। यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि इस पूरी खलबली में वैश्विक दृश्य बदल रहा है। इस प्रकार, प्रभावी समन्वित कार्रवाई से, लाभ में विविधता के रूप में सबसे पहले जो दिखता है उसे बदलना सम्भव है।

स्रोतः (1) स्पेन्स, ए॰एम॰ (2011), 'आय और रोजगार पर वैश्वीकरण का प्रभावः एकीकरण बाजारों की गिरावट, विदेशी मामले खण्ड 90(2) जाधा आर॰ वैश्विक असंतुलनः नीतियां, अवसंरचना और वित्तः एस॰ कोछर (संस्क॰), भारतीय योजना हेतु नीति निर्माण नई दिल्ली, अकादमिक फाउंडेशन।

14.38 2011 में, आईएसफ के डब्ल्यूईओ में सूचीबद्ध 184 देशों में से केवल 26 ऐसे देश थे जिनकी जनसंख्या कम से कम 10 मिलियन है और वृद्धि दर 6 प्रतिशत से अधिक थी। ये अधिकांश तथाकथित उदीयमान बाजार है। यह बिल्कुल स्वप्रमाणिक है कि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के वृद्धि परिदृश्य के बारे में धुंधले दृष्टिकोण ने वैश्विक अर्थव्यवस्था के नए वृद्धि संचालकों के रूप में उदीयमान और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं पर प्रकाश डाला है।

14.39 वैश्विक अर्थव्यवस्था में अन्तर्निहित परिवर्तन प्रश्न पैदा करता है कि क्या वैश्विक अर्थव्यवस्था में भविष्य में आने वाले परिवर्तन आसानी से सुलझ जाएंगे या फिर विघटनकारी होंगे। कहना न होगा कि भारत को, घरेलू और वैश्विक स्रोतों से उत्पन्न त्वरित आर्थिक चुनौतियों पर सावधानी से प्रतिक्रिया करने के बावजूद दोनों परिणामों को ध्यान में रखते हुए अपनी नीतिनिर्माण और अंशशोधित भी करना पड़ेगा।

14.40 वर्तमान में, वैश्विक स्थिति में विश्व वित्तीय बाजारों में अस्थिरता, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में अनिश्चित वृद्धि और अन्य भू-राजनैतिक तनावों के अलावा ऊर्जा आपूर्तियों में संभावित विघटन है। वृद्धि की अल्पावधिक आवश्यकता और मांग बनाए रखना तथा राजकोषीय समेकन जो चालू नीतिगत पर्यावरण दर्शाते हैं कि आवश्यकता के बीच विरोधाभास है। लेकिन 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट के तीन वर्ष बाद, विश्व अर्थव्यवस्था में एक के बाद एक अनिश्चितता जारी रही है। बहुपक्षीय मंचों पर प्रयास जारी रहे है, जैसे जी-20 का वैश्विक वृद्धि को वापस लाने के उपायों तक पहुंचने के लिए, वैश्विक असन्तुलनों से निपटने में अधिक समझ तथा उन कमजोरियों को दूर करना जो वैश्विक संकट के कारण हो सकते हों।इस पर विचार करने से पहले, तथापि यह उचित होगा कि भारत की वैश्विक अर्थव्यवस्था में स्थिति का पता लगाया जाए।

नई वैश्विक अर्थव्यवस्था में भारत की स्थिति का पता लगाना

14.41 वर्षों से भारत एक अधिक मुक्त अर्थव्यवस्था के रूप में उभरा है। आयात और निर्यात का कुल हिस्सा खाद्य का लगभग 50 प्रतिशत है वही अंतर्प्रवाह और सघउ का 54 प्रतिशत है। फिर भी आर्थिक परिणाम एवं घरेलू एवं विदेशी अर्थव्यवस्थाओं के बीच परस्पर क्रिया से उत्पन्न वृद्धि और विकास कई कारकों पर निर्भर करते हैं। यद्यपि आर्थिक परिणाम कुछ हद तक अर्थव्यवस्था की विशेषता बताने वाली दशाओं पर उचित नीतियों के चयन पर निर्भर करते हैं, परन्तु वैश्विक व्यवस्था में अन्य देशों की तुलना में सापेक्ष स्थिति से नीतियों का चयन आसान (अथवा निरुद्ध) हो सकता है। यह खंड भारत की उन विशेषताओं का वर्णन करता है जो वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ कार्य करने और इसके भावी विकास के लिए भी संगत है।

14.42 भारत का दर्जा ऊपर हुआ है परन्तु जी-20 में यह अभी भी निर्धनतम है: भारत पूरे विश्व में उच्च विकास दर के साथ चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में उभरा है और प्रति व्यक्ति आय (जैसाकि पूर्व में उल्लिखित है) की दृष्टि से वैश्विक रैंकिंग में भी सुधार हुआ है। फिर भी तथ्य यह है कि इनकी प्रति व्यक्ति आय बिल्कुल निम्न अभी भी निम्न है। (2011 में चालू 1527 अमरीकी डॉलर पर)। इसका समाधान शायद बड़ी चुनौती है। इसके बावजूद भारत के पास घरेलू और विदेशी दोनों प्रकार के विभिन्न घटक हैं जिनसे भविष्य में विकास की अच्छी संभावना है।

14.43 जनसांख्यिकी: 1.2 बिलियन व्यक्तियों के साथ भारत का विश्व की जनसंख्या में लगभग छठा स्थान है। जहां जनसंख्या की वृद्धि दर में निरंतर कमी आई है, परंतु भारत की जनसंख्या में वर्ष 2001-11 के दौरान लगभग 180 मिलियन व्यक्तियों की वृद्धि हुई (सापेक्ष दृष्टि से विश्व में सर्वाधिक)। तथापि, भारत ऐसे दौर से गुजर रहा है जब इस निर्भरता अनुपात वर्ष 2001 के अनुमानित 74.8 से गिरकर 2026 में कार्यशील उम्र समूह के व्यक्तियों के हिस्से में तदनुरूपी वृद्धि के साथ 55.6 हो जाएगा। श्रम के उत्पादन के प्रमुख घटक होने के साथ जनसांख्यिकी लाभांश विकास के लिए स्पष्ट रूप से सकारात्मक है। तथापि इस बात पर इंगित किया गया है कि जनसंख्या में अधिकांश वृद्धि वर्तमान समय में गरीब राज्यों में होगी। अत: इस लाभांश के लिए पर्याप्त मात्रा में मानव पूंजी निर्माण की आवश्यकता होगी।

14.44 इस संबंध में भारत में मानव विकास सूचकांक (एचडीआई) की दृष्टि से कुछ सुधार देखा गया है। यूएनडीपी का एचडीआई जिसमें आर्थिक निर्देशांक और शिक्षा और स्वास्थ्य संकेतकों की दृष्टि से भारत की प्रगति के साथ 1980 के 0.344 से 2011 में 0.547 की प्रगति देखी गई है। भारत का रैंक 1980 के 82 से बढ़कर 2011 में 72 हो गया। (100 देशों के समूह में जिनके लिए इस समय एचडीआई उपलब्ध है। भारत के अंक में सुधार के बावजूद इसके एचडीआई रैंक में बहुत महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ा है। एक संभाव्य कारण यह हो सकता है कि कुछ अन्य देशों ने इस सूचकांकों में तीव्र सुधार दर्ज किया होगा। परन्तु भारत को अपने सूचकांकों में तीव्र सुधार दर्ज कराया होगा। अत: भारत को न केवल सापेक्ष दृष्टि से बल्कि अन्य देशों के संबंध में भी अपनी उपलब्धियों (विभिन्न मंचों पर) को बेंचमार्क किए जाने की आवश्यकता है।

14.45 निर्यात एवं विदेशी मांग: भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में निर्यात की बढ़ोत्तरी (आयात में भी) देखी गई जो 2010 में समग्र रूप में विश्व का 27.9 प्रतिशत हो गई, जबकि कुछ देशों में निर्यात पर कहीं अधिक निर्भरता देखी गई। तथा कथित पूर्व एशियाई चमत्कारी अर्थव्यवस्थाओं का यह तथ्य था कि निर्यातोन्मुख, निवेशपूर्ण कार्यनीति ने विकास को बढ़ाया और विनिर्माण योग्यताओं को प्राप्त करने में सहायक रही। इस कार्यनीति को अनुकूल विनिमय दर, सस्ता ऋण और अपेक्षाकृत कम मजूदरी की सहायता प्राप्त हुई जिससे प्रतिस्पर्धात्मक लाभ प्राप्त हुआ। माल की वैश्विक मांग, विशेषकर उन्नत बाज़ारों में से विकास कार्यनीति को सहायता मिली। परिणामस्तरूप, इन अर्थव्यवस्थाओं की वजह से विनिर्माण में मूल्य श्रृंखला आगे बढ़ गई। (सारणी 14.9)।

14.46 निर्यात से भारत का विकास कहां तक हो सकता है। उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में मंदी से उनके विकास की संभावना से आयात की मांग (अर्थात् अन्य देशों से निर्यात) इस समय कुछ

सारणी 14.9 : माल एवं सेवाओं का निर्यात (सघउ का प्रतिशत)

वर्ष	विश्व	उच्च आय	यूएसए	यूके	ईयू	ईए	जर्मनी	जापान	ब्राजील	रूस	भारत	चीन	द. अफ्रीका
1980	19.1	19.9	10.1	27.1	25.5	24.7	20.2	13.5	9.1	na	6.2	10.6	35.4
1990	19.2	19.3	9.6	24.0	27.0	27.1	24.8	10.4	8.2	18.2	7.1	16.1	24.2
2000	24.7	24.3	11.0	27.6	35.8	36.7	33.4	11.0	10.0	44.1	13.2	23.3	27.9
2005	26.7	25.6	10.4	26.4	36.9	38.0	41.3	14.3	15.1	35.2	19.3	37.1	27.4
2010	27.9	27.8	12.6	29.4	39.7	40.6	46.8	15.2	11.2	30.0	21.5	29.6	25.5

स्रोत: विश्व बैंक डाटाबेस

हद तक हल्की प्रतीत होती है। दूसरी बात यह है कि कुछ देशों (चीन सहित) में क्षमता निर्माण अधिक हो जाने से वे नए देशों के लिए कुछ समय के लिए रुकावट के रुप में कार्य कर सकते हैं। तीसरी बात यह है कि ऊर्जा की लागत बढ़ रही है और जलवायु परिवर्तन के संबंध में चिंताएं बढ़ रही हैं।

14.47 इस संबंध में सघउ में भारत के निर्यात (माल एवं सेवाओं का) का अनुपात 1990 के 6.2 प्रतिशत से बढ़कर 2010 में 21.5 प्रतिशत हो गया। फिर भी विश्व निर्यात में भारत का हिस्सा केवल 1.5 प्रतिशत है। भारत का निर्यात माल एवं सेवाओं के बीच समान रूप से संतुलित है। इसके अतिरिक्त, निर्यात की दिशा में परिवर्तन से यह पता चला है कि भारत निर्यात हेतु पारम्परिक बाजारों से भिन्न स्थलों में विविधीकरण ला रहा है (चित्र 14.7)।

14.48 अत: निर्यात के विशेषकर तीव्र विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में बढ़ने की गुंजाइश है जिनमें से अधिकांश एशिया और अफ्रीका में और कुछ हद तक लैटिन अमरीका में है, वहीं कुछ परिपक्व बाजार महत्वपूर्ण हो सकते हैं हालांकि समूह के लिए समग्र रूप से हिस्से में गिरावट हो रही है। इसके अतिरिक्त वैश्विक बाजार में उपस्थिति का मुख्य लाभ वैश्विक मानकों तक बेंचमार्क करने में समर्थ होना है तथा इस प्रकार अपने अधिकार का अनुसरण करना है। इसके अतिरिक्त, घरेलू और निर्यात मांग की दो शक्तियों का लाभ यह है कि यह अर्थव्यवस्था को वैश्विक मांग में उतार-चढ़ाव के प्रति अधिक लचीलापन प्रदान करता है।

14.49 अनुसंधान एवं विकास तथा नवाचार में निवेश: विश्व बैंक के 'भारत के नवाचार को उन्मुक्त करना (2007) नामक अध्ययन में यह देखा गया कि भारत उच्च प्रौद्योगिकी वाले उत्पादों और सेवाओं में शीर्षस्थ वैश्विक प्रवर्तक बन गया है। फिर भी, देश अपने नवाचार सभाव्यता की दृष्टि से कम निष्पादन कर रहा है। भारत अनुसंधान एवं विकास के क्षेत्र, जिसमें मूल अनुसंधान, अनुप्रयुक्त अनुसंधान और प्रयोगात्मक विकास शामिल है, में अपने सघउ का 0.9 प्रतिशत से भी कम व्यय करता है। यह तथ्य ओईसीडी तथ्य पुस्तक 2010 से लिया गया है जिसकी सूची में 41 देश है और इजरायल इसमें शीर्ष स्थान पर है तथा अधिकांश विकसित

चित्र 14.7 भारत से निर्यात की दिशा–प्रतिशत भागीदारी

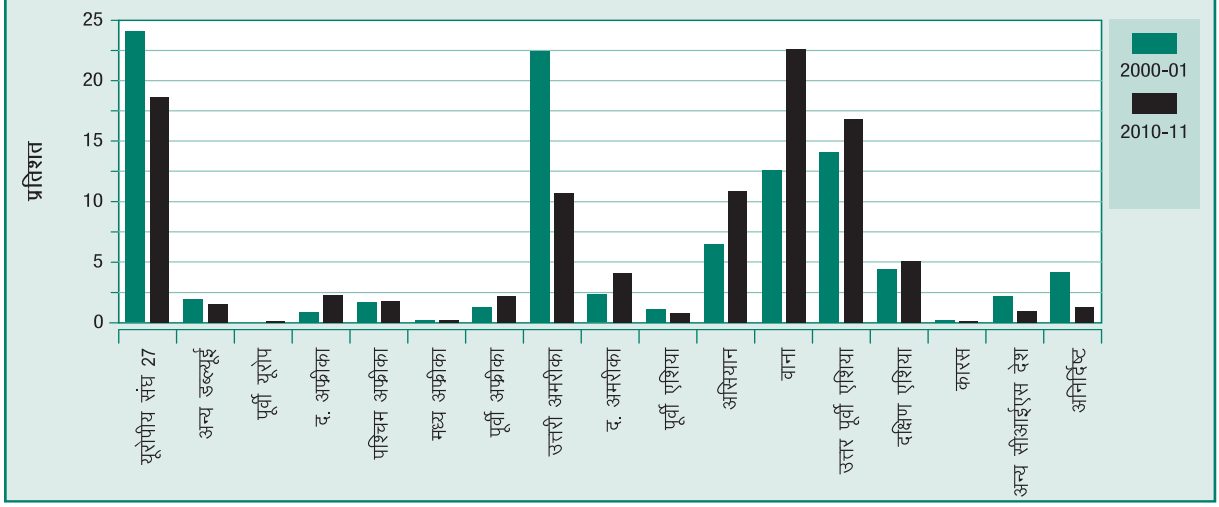

चित्र 14.8 सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के तौर पर अनुसंधन तथा विकास दर सकल घरेलू व्यय

देश अपने सघउ का 2 प्रतिशत से अधिक भाग अनुसंधान एवं विकास पर व्यय करते है। जहां अनुसंधान एवं विकास में अधिक संसाधनों की आवश्यकता होगी, वहीं दूसरी ओर औपचारिक अनुसंधान एवं विकास के लिए स्थापित मौजूदा संस्थाओं और संगठनों का दोहन किया जाना समान रूप से महत्वपूर्ण होगा तथा साथ ही आधारभूत स्तर के नवाचार को भी प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता होगी (चित्र 14.8)।

14.50 इस तथ्य बढ़ती स्वीकृति को देखते हुए कि भूमि, जल और ऊर्जा के समाप्त होने की संभावना है और पर्यावरण एक प्रमुख चिंता है, भारत पूर्ण रुप से मितव्ययी नवाचार के मार्ग के जरिए अग्रसर होते तथा बुनियादी तौर पर विशिष्ट अनुप्रयोग तैयार करने से विकासशील विश्व के अन्य देशों में भी नए बाजार खुलेंगे। भारत अपने अनुसंधान एवं विकास प्रयासों को तुरंत शुरू करने हेतु अपने विशाल मंच का लाभ उठाने को तैयार है। सामरिक रूप से भारत की अनुसंधान एवं विकास में एफडीआई हेतु मुख्य केन्द्र के रूप में स्थिति से इस प्रौद्योगिकियों और उत्पादों के अगले चरण में जाने के लिए सुगमता होगी।

14.51 ऊर्जा सुरक्षा और विकास: भारत में चीन, दक्षिण अफ्रीका और रूस के मुकाबले सघउ की अपेक्षाकृत कम ऊर्जा तीव्रता है परन्तु ब्राजील की तुलना में यह अधिक है। विकसित देशों, विशेषकर ईयू देश और जापान में प्रौद्योगिकीय सुधारों को छोड़कर विभिन्न कारकों के कारण सघउ की ऊर्जा तीव्रता में कमी देखी गई है। इनमें से मुख्य कारक सेवाओं के संबंध में उनकी अर्थव्यवस्थाओं के ढांचे में परिवर्तन होना रहा है (सारणी 14.10)।

14.52 आयातित ऊर्जा स्रोतों पर निर्भरता समग्र स्तर पर कुल ऊर्जा उपयोग की दृष्टि से 25.7 प्रतिशत पर संतुलित रही (सारणी 14.11)। तथापि, उपयोग किए जाने वाले कच्चे तेल का लगभग 80 प्रतिशत आयात किया जाता है, वहीं दूसरी ओर कोयले का उत्पादन पूर्णत: देश में होता है। कोयले के संबंध में भी देश घरेलू मांग की पूर्ति हेतु मामूली आयात कर रहा है। दूसरी ओर जनसंख्या के एक बड़े भाग में ऊर्जा के वाणिज्यिक स्रोत की कम पहुंच है अथवा वंचित है तथा पारम्परिक स्रोतों पर निर्भर करता है (सारणी 14.11)

सारणी 14.10 : सघउ में ऊर्जा का प्रतियूनिट उपयोग

देश	1980	1990	2000	2009
चीन	0.9	1.4	3.1	3.7
यूरोपीय संघ	5.4	5.9	7.1	8.2
भारत	3.0	3.3	3.9	5.1
रूस फेडरेशन	उ.न.	2.1	2.0	3.0
ब्राजील	8.1	7.7	7.3	7.6
यूएसए	2.8	4.2	4.9	5.9
यूनाइटेड किंगडम	5.2	6.6	7.8	10.1
दक्षिण अफ्रीका	3.7	3.0	2.9	3.2
जापान	6.4	7.3	7.0	7.9

स्रोत: विश्व बैंक डाटाबेस

नोट: *स्थिर 2005 पीपीपी डॉलर

सारणी 14.11 : ऊर्जा का आयात, निवल (ऊर्जा उपयोग का प्रतिशत)

देश	1980	1990	2000	2009
यूएस	13.9	13.7	26.7	22.0
यूरोपीय संघ	44.9	42.2	43.9	50.6
यूनाइटेड किंगडम	0.3	-1.0	-22.2	19.2
जर्मनी	48.0	47.0	59.9	60.1
जापान	87.4	82.9	79.6	80.1
ब्राजील	43.5	25.7	21.6	4.1
रूस		-47.1	-57.9	-82.6
भारत	8.9	7.9	19.9	25.7
चीन	-2.8	-2.7	2.8	7.6
दक्षिण अफ्रीका	-12.0	-22.0	-27.3	-11.5

स्रोत: विश्व बैंक डाटाबेस

14.53 अंतरराष्ट्रीय बाजारों में तेल की कीमत में वृद्धि चालू खाता घाटा पर इसके प्रभाव के कारण भारत की बृहत अर्थव्यवस्था के लिए अतिसंवेदनशीलता का मुख्य स्रोत रही है। जीवाश्म ईंधनों की उच्च अंतरराष्ट्रीय कीमतों के फलस्वरुप आयात बिल में बढ़ोत्तरी भी होती है तथा इसका वहन उपभोक्ताओं को करना पड़ता है अथवा सब्सिडी में बढ़ोत्तरी होती है जिससे राजकोषीय स्थिति प्रभावित होती है। इसके अलावा, कई तेल उत्पादक अर्थव्यवस्थाओं में बढ़ता हुआ तनाव भारत की ऊर्जा सुरक्षा के लिए अतिसंवेदनशीलता का एक स्रोत है। इस क्षेत्र में भारत को समरिक लाभ अपने ऊर्जा स्रोतों के विविधीकरण से प्राप्त होगा।

14.54 खाद्य सुरक्षा: भारतीय संदर्भ में खाद्य सुरक्षा से अभिप्राय सभी लोगों के लिए वहनीय कीमतों पर अपेक्षित सूक्ष्म पोषक तत्वों के सब न्यूनतम ऊर्जा और प्रोटीन मानकों की पूर्ति से है। आय की बढ़ोत्तरी के साथ भारत में खाद्य हेतु मांग के और बढ़ने की संभावना है। यह भी देखा गया है कि भारत में विशिष्ट खाद्य वस्तुओ में मामूली कमी से भी अंतराष्ट्रीय बाजार में भी संबद्ध कीमतों पर असमानुपाती रूप से बड़ा प्रभाव पड़ता है। हालांकि भारत अधिकांश खाद्य उत्पादों का अधिकांश वर्षो में आयातक नहीं रहा है, परन्तु वैश्विक बाज़ारों पर निर्भरता से कीमतों और उपलब्धता दोनों की दृष्टि से अधिक अति-संवेदनशीलता हो सकती है जिनमें कि जिंसों के वित्तपोषण और जिंस कीमतों तथा उनकी अस्थिरता पर इसके प्रभाव के बीच संबंध अंतरराष्ट्रीय चिंता का मुद्दा रहा है, हालांकि कारण-निवारण संबंध पर कोई स्पष्ट मत नहीं रहा है।

14.55 विकास के संसाधन और पूंजी की उपलब्धता न्यूनतमवादी अवस्था और कई कार्यकलापों से अलग होने की आवश्यकता के आधार पर अक्सर कोई मामला बनता है। वास्तविक तथ्यों से अलग बातों का पता चलता है। भारत का सघउ के संबंध में सामान्य सरकारी व्यय कई बाजार अर्थव्यवस्थाओं से कम से कम आधे कारक से वास्तविक रुप में कम होता है। इससे अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि सामान्य सरकारी राजस्व का सघउ में 17.6 प्रतिशत का अनुपात (सारणी 14.8 देखें) उभरती अर्थव्यवस्थाओं के निम्नतम में से एक रहा है और विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में निश्चित रूप से अत्यंत कम रहा है। अत: राजकोषीय समेकन की आवश्यकता होने पर भी प्राथमिकता संसाधन जुटाने पर है। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में हाल के घटनाक्रमों से यह पता चलता है कि राजस्व आधार को बनाए रखना और सरकारी वित्त साधनों की मात्रा बनाए रखना कितना महत्वपूर्ण है। जैसा कि भारत पर विदेशी अर्थव्यवस्था का प्रभाव अधिक होता है, अत: बृहत राजस्व आधार पर आधारित इसकी राजकोषीय शक्ति कहीं अधिक महत्वपूर्ण हो जाएगी।

14.56 एफडीआई-महत्वपूर्ण ढंग से कार्य करते हुए अधिकांश विकसित अर्थव्यवस्थाएं जो प्रौद्योगिकी की दृष्टि से सुदृढ़ हैं, अब पुरानी सोसाइटियां बन गई हैं और उन्हें विदेशों में निवेश करते और निमित्त आय पर निर्भर रहने की आवश्यकता है। जिस चरण में भारत की स्थिति है स्थायी निवेश की आवश्यकता पर जोर सर्वेक्षण में कहीं और दिया गया है। भारत की अधिक 'वास्तविक' निवेश की आवश्यकता और अपनी आपूर्ति श्रृंखलाओं के विविधीकरण के उद्देश्य से विदेश में स्थित मित्र देशों में उत्पादन सुविधाओं में निवेश करने के लिए कुछ औद्योगिकृत अर्थव्यवस्थाओं सहित कुछ विकसित अर्थव्यवस्थाओं के लिए आवश्यकता के बीच एक अंतर्निहित पूरक संबंध है।

14.57 **विप्रेषण** वित्तीय प्रवाहों का एक महत्वपूर्ण स्रोत है और विश्व बैंक अनुमान के अनुसार 2011 में विकासशील देशों में विप्रेषण प्रवाह 351 बिलियन अमरीकी डॉलर था। भारत में विप्रेषण प्रवाह के 58 बिलियन अमरीकी डॉलर होने का अनुमान है। वर्ष 2010 में देश में सघउ का 3 प्रतिशत विप्रेषण रहा। ऐस उच्च अंतर्प्रवाहों का एक कारण तेल की उच्च कीमत हो सकती है जिससे खाड़ी देशों और तेल के अन्य निर्यातकों, जहां काफी संख्या में भारतीय कामगार नियुक्त हैं, को सहायता मिली। वर्ष 2011 के उत्तरार्द्ध में भारतीय रुपए के अवमूल्यन से भी सहायता मिली होगी।

14.58 प्रजातांत्रिक फ्रेमवर्क में अर्थव्यवस्था: वैश्विक आर्थिक संकट से बाजार तथा राष्ट्र की सापेक्ष भूमिका तथा राष्ट्र प्रेरित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में प्रजातांत्रिक अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में प्रजातांत्रिक अर्थव्यवस्थाओं के सापेक्ष लाभ पर बहस पुन: छिड़ गई। प्रजातंत्रिक और संघीय प्रणाली के भीतर मिश्रित अर्थव्यवस्था के संचालन की चुनौती एक जटिल कार्य है। तथापि, राष्ट्रप्रेरित प्रदर्शक प्रणाली में स्थानांतरण की चुनौती कहीं अधिक निरूत्साह करने वाली है। किसी भी मामले में फलने-फूलने वाली प्रणाली के लिए आर्थिक परिणामों को ठोस रुप में होने की आवश्यकता है। अत: महत्वपूर्ण प्रश्न राष्ट्र बनाम बाजार नहीं बल्कि अभिशासन के लिए राजनीतिक आधार के रूप में प्रजातांत्रिक प्रणाली के साथ कैसे बाजार परिणामों को अधिक से अधिक करना (बाजार असफलताओं को न्यूनतम करना) और प्रभावी अभिशासन (अर्थात् सरकारी असफलताओं को न्यूनतम करना) लाना है।

14.59 जैसा कि पहले विचार किया जा चुका है कि भारत इस अवसर पर *जनसांख्यिकी निवेश (घरेलू बचतों से पोषित), घरेलू उपभोक्ता के साथ ही निर्यात तथा एफडीआई की पर्याप्त गुंजाइश जो बहुलवादी तथा प्रजातांत्रिक व्यवस्था में मौजूद हैं, जैसे कई विकास वाहक* के अद्वितीय लाभ से युक्त है। यह

अद्वितीय संयोग किसी न किसी रूप में प्रत्येक चरण तथा समाज में प्रत्येक अंग हेतु ठोस तथा सतत विकास का सुनिश्चय करती है। और इससे सकारात्मक आर्थिक परिणामों की अपेक्षा है।

वैश्विक अर्थव्यवस्था को ठीक करना

14.60 वैश्विक वित्तीय संकट (जो अक्टूबर 2008 में लेहमैन ब्रदर्स की विफलता के साथ अपने चरम पर पहुंच गया) में सब सम्मिलित है। वृहत स्तर पर, उन्होंने शिथिल मौद्रिक नीतियां बनाई जो एक तरफ संकट के जिम्मेदार अवधि के आरक्षित मुद्रा-निर्गम उन्नत अर्थव्यवस्थाओं (विशेष तौर से अमरीका) द्वारा धारित है तथा दूसरी तरफ जिसने संचालित अर्थव्यवस्थाओं द्वारा व्यापारिक नीतियां धारण की जिससे विशाल चालू लेखा अधिशेष और आरक्षित निधियों का संचयन हुआ। इन नीतियों को अन्तरराष्ट्रीय मौद्रिक प्रणाली (आईएमएस) में कमजोरियों विशेषतौर से डालर में वैकल्पिक आरक्षित आस्तियों की अनुपस्थिति ने आसान बनाया था। वित्तीय बाजारों और मध्यवर्ती संस्थाओं का कमजोर विनियमन अतिरिक्त वित्तीय नवाचार और वृहत स्तर पर वित्त और बैंकिंग मध्यवर्ती संस्थाओं द्वारा जोखिम लेने को भी संकट के निकटवर्ती कारणों के रूप में चित्रित किया गया है।

14.61 जी-20 (और अन्तरराष्ट्रीय संगठनों और वित्तीय संस्थानों सहित अन्य मंच) की वाद-विवाद और चर्चाओं के विषय इसीलिए विस्तृत रहे हैं। वैश्विक अर्थव्यवस्था इसके असन्तुलनों को प्रभावित करने वाले देश विशेष की सुधारशील वृद्धि के नीति प्रकार और क्या वे किसी तरह बेहतर समन्वित हैं, का प्रश्न इन चर्चाओं का केन्द्रबिन्दु रहा है। ये चर्चाएं कुछ महत्व की है क्योंकि वे आने वाले वर्षों में वैश्विक अर्थव्यवस्था के शासन की शैली और सार को आकार दे सकते हैं। यह निर्णायक है कि परिणाम यदि कोई हो, उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं (जैसे भारत) की उन चिंताओं को दूर करते हैं जो वैश्विक आर्थिक वृद्धि के प्रमुख संचालक हैं।

14.62 अत: निम्नलिखित भाग केवल कुछ उन चुनिंदा मुद्दों की जांच करता है जो अन्तरराष्ट्रीय विचार-विमर्शों (मुख्यत: जी-20 में) के विषय रहे हैं और वे भारत से किस प्रकार सम्बद्ध हैं। तथापि, यह प्रक्रियाओं के औपचारिक दृष्टिकोण या विशेष मुद्दों जिनमें से कई तो अभी विकसित हो रहे हैं, को आवश्यक रूप से प्रस्तुत नहीं करेगा।

14.63 **2011 में जी-20:** जो ईस्ट एशिया संकट के बाद के परिणामों में वित्त मंत्रियों और केन्द्रीय बैंक के गवर्नरों के मंच के रूप में 1999 में बना, नवम्बर 2008 में वाशिंगटन डीसी में लीडर्स समिट के बाद केन्द्रीय भूमिका में आया। यह वैश्विक वित्तीय संकट के बाद त्वरित परिणाम सामने आयी चुनौतियों का सामना करने के लिए समन्वित उपायों पर केन्द्रित हुआ। 2009 में पिट्सबर्ग अमरीका में जी-20 शिखर सम्मेलन में एक घोषणा से नेताओं के स्तर पर एक मंच बना और इसे अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक सहयोग के पूर्व मंच में बदल दिया।

14.64 3-4 नवम्बर 2011 को कान, फ्रांस में आयोजित नवीनतम (छठा) शिखर सम्मेलन की कार्यसूची में फ्रांस के राष्ट्रपति द्वारा प्रस्तुत वरीयताएं थी। इस कार्यसूची में 2011 में दो तरीके से विचार-विमर्श किया गया। पहला था, वित्त तरीका जो सशक्त सतत् और सन्तुलित वृद्धि फ्रेमवर्क, अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा प्रणाली (आईएमएस) सुधार वित्तीय विनियमन सशक्तिकरण और जिंस मूल्य अस्थिरता से संबंध अन्य मुद्दों पर विस्तृत ध्यान केन्द्रित रहा। शेरपा के तरीके में मुद्दों का दूसरा सेट विकास सम्बद्ध मुद्दों पर केन्द्रित था।

14.65 **फ्रेमवर्क अभ्यास:** वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान, वृहत आर्थिक प्रोत्साहन (राजकोषीय और मौद्रिक) और वित्त क्षेत्र हस्तक्षेप के माध्यम से जी-20 द्वारा सामूहिक और समन्वित नीति कार्रवाई से आपात मंदी से बचने में मदद मिली। इसी पर आधारित जी-20 के नेताओं ने 2009 मे कार्यदल की सह-पीठों के रूप में भारत और कनाडा के साथ सशक्त सतत् और सन्तुलित वृद्धि की शुरुआत की। जी-20 के शुरुआती प्रयास में, पारस्परिक आकलन प्रक्रिया (एमएपी) यह सुनिश्चित करने के लिए मध्यावधि अभ्यास करते हैं कि सामूहिक नीतिगत कार्रवाइयां सभी को लाभ पहुंचाए तथा नीतियां जी-20 के वृद्धि उद्देश्यों के सामूहिक रूप से संगत है।

14.66 सिओल 2010 में आयोजित सम्मेलन में जी-20 उन मुख्य असन्तुलनों को दूर करने के लिए कार्य करने हेतु प्रतिबद्ध था जो वृद्धि में बाधक हो सकते थे और मुख्य असन्तुलनों के निर्देशात्मक दिशानिर्देशों के साथ एमएपी को बढ़ाने हेतु 1फरवरी 2011 में जी-20 निम्नलिखित को शामिल करने के लिए सहमत था (i) लोक ऋण और राजस्व घाटे (ii) निजी बचत और निजी ऋण तथा (iii) विदेशी स्थिति व्यापार संतुलन और निवल निवेश आय प्रवाह और अन्तरण-बाह्य और आन्तरिक असन्तुलनों के आकलनों के मुख्य संकेतकों के रूप में। तदनन्तर, इस बात पर सहमति हुई कि निर्देशात्मक दिशा निर्देश महत्वपूर्ण देशों को प्रबन्ध तरीके से पहचानने और एक-दूसरे की आर्थिक नीतियों के आकलन करने, नीतिगत उपायों को सुझाने सम्भावित अस्थिरकारक असन्तुलन को हल करना और विदेशी धारणीयता के सम्बन्ध में प्रगति का आकलन के लिए परिस्थिति तैयार करने के लिए उपयोग में लाई जाएगी।

14.67 इस संबंध में, वैश्विक सघउ में हिस्सेदारी के सन्दर्भ में मापे जाने पर, भारत की पहचान व्यवस्थित महत्वपूर्ण अर्थव्यवस्था के रूप में कर ली गई है। लेकिन यह चालू लेखा

घाटा से प्रमाणित के रूप में वैश्विक मांग में निवल अंशदान दाता है। चूंकि भारत की विनिमय दर मुख्य रूप से बाजार निर्धारित है, अतः इसकी घरेलू बचतें मुख्य रूप से घरेलू निवेश वित्तपोषण उन्मुख है जो उच्च वृद्धि के स्तर पर उचित है लेकिन उपभोग नियंत्रण लागत पर नहीं। यदि भारत वैश्विक असंतुलनों को अंशदाता नहीं होता तो स्पष्टतया इसके हित इन मुद्दों और उन उपायों के संबंध में जो वैश्विक वृद्धि सुधार में मदद कर सके, के आसान संकल्प में होता।

14.68 **अन्तरराष्ट्रीय मौद्रिक प्रणाली सुधार** के बारे में यह तर्क दिया गया कि आईएमएस के पास विदेशी लेखा संबंधी असंतुलनों के ढेर तथा घाटा राष्ट्रों संबंधी समायोजन गिरावटों के बोझ को रोकने की कोई कार्य प्रणाली नहीं है। 2008 के संकट काल में यह महसूस किया गया कि अमरीका जैसे देश आरक्षित मुद्रा जारी करने के विशेषाधिकार के बल पर राजकोषीय और चालू लेखा घाटों को येनकेन प्रकारेण बनाए रख सकेगा। लेकिन इस प्रवृत्ति ने तथा कथित विदेशी असंतुलनों पर जोर दिया हालांकि यह उस संकट का प्राथमिक कारण नहीं था जो वैश्विक बन गया।

14.69 फ्रेंच प्रेसिडेन्सी ने आईएमएस सुधार संबंधी जी-20 कार्य दल का गठन किया जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ पूंजी प्रवाह और उसका प्रबंधन (सीएफएम) वैश्विक नकदीकरण का मापन, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा भंडार रखना और विशेष आहरण अधिकारों (एसडीआर) की भावी भूमिका और संरचना पर फोकस किया गया। जहां बाद के दो मुद्दे सतत् कार्य आईएमएस समूह के कार्य की रूपरेखा के क्षेत्र हैं, वहीं कान शिखर सम्मेलन की विज्ञप्ति में यह उल्लेख किया गया है कि पूंजी प्रवाहों के प्रबंधन हेतु सुसंगत निष्कर्ष वित्तीय भूमंडलीकरण के लाभ प्राप्त करने हेतु जी-20 को उन जोखिमों को रोकने और उनके प्रबंधन में मार्गदर्शन करेंगे जो राष्ट्रीय और वैश्विक स्तरों पर वित्तीय स्थिरता और स्थायी विकास को दुर्बल कर सकते हैं।

14.70 पूंजी प्रवाहों में अस्थिरता का मुद्दा उनके उभरते बाजारों (भारत सहित) के लिए चिंता का विषय रहा है। पूंजी प्रवाहों का प्रबंधन दो लिहाज़ से संतुलित हैं। पहली चुनौती जो वैश्विक पूंजी प्रवाहों में अनिश्चितता और विकसित देशों में अनुसरण की जाने वाली मौद्रिक नीतियों की वजह से उत्पन्न हुई है और अधिकांश विकासशील देशों में आम है। उभरते बाजार अकस्मात् ठहराव और उत्क्रमण (जैसाकि दिसम्बर 2011 में देखा गया था) का सामना करते हैं जिसकी वजह उनकी अपनी अर्थव्यवस्थाओं के घटनाक्रम से संबद्ध नहीं होती है बल्कि विकसित अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय संस्थाओं को होने वाली गम्भीर कठिनाइयां होती हैं। विकसित देशों में मौद्रिक प्राधिकारियों द्वारा अनुकरण किया जाने वाला परिमाणात्मक रूप से हल्का किया जाने वाला कार्य (ब्रोकर निजी और सार्वजनिक बैलेंस शीटों की मरम्मत के लिए आवश्यक नकदीकरण के संदर्भ में समझा जा सकता है। सापेक्ष रूप से नई घटना है जिसने पूंजी प्रवाह की संरचना बदल दी है और प्राप्तकर्ताओं द्वारा उनका प्रबंधन अधिक कठिन हो गया है।

14.71 दूसरा विचार भारत की विशिष्ट स्थिति से उत्पन्न होता है। वर्ष 1991 की एक घटना के पश्चात् भारत के भुगतान संतुलन की स्थिरता के बावजूद भारत का चालू खाता घाटा पिछले वर्ष से बढ़ गया है। घाटे के वित्तपोषण हेतु निजी पूंजी अंतप्रर्वाहों पर निर्भरता बढ़ गई है। अब तक यह ज्ञात है कि वर्तमान आईएमएस में समायोजन का भार प्रमुख रूप से नॉन-रिजर्व-इश्यूइंग चालू खाता घाटा वाले देशों (भारत जैसे) पर पड़ता है। देश के लिहाज से घरेलू और अंतरराष्ट्रीय घटकों और जोखिमों को देखते हुए और बहुल लिखतों के विवेकपूर्ण उपयोग के जरिए एक सतर्क और अंशशोधित दृष्टिकोण अपनाकर भारतीय अर्थव्यवस्था में पूंजी प्रवाहों के प्रति अधिक खुलापन आया है।

14.72 विदेशी अतिसंवेदनशील संकेतकों में परिवर्तन और भारत की आयातित तेल पर निर्भरता को देखते हुए पूंजी खाते के प्रबंधन (जिसने भारत की अच्छी सेवा की है) को सुदृढ़ किए जाने तथा अल्पावधि प्रवाहों के बजाए अधिक स्थिर पूंजी प्रवाह को प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है। भारत जैसे देशों को उन विकल्पों के मौद्रिक पर निर्भर रहने की आवश्यकता है जिसमें किसी विहित क्रम की बाध्यता के बिना वृहत् आर्थिक और वृहत् विवेकपूर्ण साधन और अन्य उपाय नीतिगत साधनों के रूप में हैं। इस परिस्थितियों में पूंजी प्रवाहों के प्रबंधन संबंधी सुसंगत निष्कर्ष (जी-20 द्वारा यथाअनुमोदित) गैर-बाध्यकारी हैं जिन्हें नोट किए जाने की आवश्यकता है।

14.73 वैश्विक नकदीकरण में प्रवृत्ति संबंधी एक मुद्दा जिस पर कुछ देशों द्वारा अंतरराष्ट्रीय प्रारक्षित मुद्रा भंडारों के संचयन पर वार्ता हो रही है। ऐसा तर्क दिया गया है कि प्रारक्षित भंडारों के संचयन की नकारात्मक बाध्यता है और धारक देशों पर परिहार्य खर्च भी होते हैं। मुद्दा यह है कि प्रारक्षित भंडारों की धारिता कब अत्यधिक हो सकती है उनका इष्टतम स्तर क्या हो सकता है। यदि कोई हो तो और क्या किसी प्रकार का रिजर्व मेट्रिक्स अपनाया जा सकता है। जहां मुद्रा बाजारों में मध्यस्थता करने में प्रारक्षित भंडारों का उपयोग करने की इष्टतम मात्रा और उपयोगिता विवादयोग्य हो सकती है, वहीं विशेषकर भारत जैसी अर्थव्यवस्थाओं के मामले में अनुभव यह रहा है कि प्रारक्षित भंडारों ने बाध्य कारकों की वजह से बाहरी अनिश्चितताओं की अवधियों के दौरान अधिक मुक्त अर्थव्यवस्था लाने और निवेश और खपत को सुगम बनाने में सहायता की है। इस संदर्भ में चालू खाता घाटा वाले देशों (जैसे भारत)

प्रारक्षित भंडारों की धारिता और विशाल सरकारी सम्पत्ति निधियों के अलावा निरंतर चालू खाता अधिशेष वाले देशों के द्वारा संचित प्रारक्षित भंडारों में विभेदीकरण किए जाने की आवश्यकता है। संबंधित मुद्दे जिन पर जी-20 में वार्ताएं हो रही हैं, का संबंध वैश्विक वित्तीय सुरक्षा उपायों का सुदृढ़ीकरण, आईएमएफ और ऐसे देशों जो बहिर्जात झटकों (और आपातकालीन सहायता प्राप्त करते हैं) और आईएमएफ की पर्याप्तता जिससे कि समग्र सदस्यता के लाभ हेतु प्रणालीगत भूमिका निभाई जा सके से निबटने में सहायता प्रदान करने में क्षेत्रीय वित्तीय करारों के बीच सहयोग के साथ होता है।

14.74 वित्तीय विनियमन: विशाल वित्तीय क्षेत्रों वाली कुछ अधिक विकसित अर्थव्यवस्थाओं के साथ 7 देशों का समूह (जी-7) उस समूह का जिन्होंने बेसल बैंकिंग पर्यवेक्षण समिति 1974 की स्थापना की थी, जिनका प्रारंभिक काम इन अर्थव्यवस्थाओं के वित्तीय क्षेत्र, विशेषकर बड़े बैंकों के पर्यवेक्षण के समन्वयन हेतु एक मंच के रूप में कार्य करना था, सर्वाधिक महत्वपूर्ण भागीदारों का समूह था। वर्ष 2007-09 के वैश्विक वित्तीय संकट जो तीस के दशक के बाद से सर्वाधिक गंभीर था, के पश्चात् वित्तीय विनियमन की प्रभाविता पर सवालिया निशान लगाया गया। उसके बाद अन्तरराष्ट्रीय विनियामक मानदण्डों तथा संगठनों के सन्दर्भ में देशों तथा अन्तरराष्ट्रीय स्तर के तहत वित्तीय विनियमन के महत्वपूर्ण सुधार हुए हैं।

14.75 **वित्तीय विनियमन सुधार:** सामान्यत: वित्तीय बाजारों और मध्यस्थों का विनियमन करते और नवाचार के बिना वित्तीय स्थिरता और बढ़िया बाजार संचालन बनाए रखने की आवश्यकता के बीच संतुलन बनाना हमेशा से चुनौतीपूर्ण रहा है। इस कार्य में वैश्विक संकट की वजह से अंतर्निहित कठिनाई आई है विशेषकर उन वित्तीय संस्थाओं को जिन्होंने विदेशों में व्यापार और प्रदर्शन किया है। ऐसा होने का कारण यह है कि वित्तीय वैश्वीकरण के साथ कई बैंकों और वित्तीय बाजार के अन्य भागीदारों ने विदेशों में व्यापार किया परन्तु उनमें से अधिकांश राष्ट्रीय विनियमनों के अधीन रहे।

14.76 वित्तीय विनियमन में खामियों (वैश्विक असंतुलनों से भिन्न) को वैश्विक संकट का प्रमुख कारण माना गया। कान शिखर सम्मेलन की विज्ञप्ति 2011 में उस वचनबद्धता को बार-बार दुहराया गया है कि वित्तीय बाजारों, उत्पादों और भागीदारों को अंतरराष्ट्रीय रूप में संगत और निष्पक्ष तरीके से उनकी अवस्था में उचित निरीक्षण के साथ विनियमित किए जाएं अथवा अधीन रखे जाएं। यह घोषणा उन पहलों की व्याख्या करता है जिनमें बैंकों का विनियमन, ओवर द काउंटर (ओटीसी) व्यूत्पन्न, क्षतिपूर्ति पद्धतियां और क्रेडिट रेटिंग एजेन्सियां शामिल हैं। कान कार्य योजना के वित्तीय विनियमन हेतु नए मानकों पर अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआईएस) और वित्तीय स्थिरता बोर्ड (एफएसबी) द्वारा किए गए कार्य के आधार पर इन पहलों को आगे बढ़ाए जाने की वचनबद्धता की गई है।

14.77 बैंकों के लिए बेसल III मानक कार्यान्वित करने की वचनबद्धता का वैश्विक अर्थव्यवस्था में विशेष महत्व हैं। बेसल III पूंजी और नकदीकरण मानकों का कार्यान्वयन वर्ष 2013 में आरंभ किया जाएगा और 2019 तक की परिकल्पना के अनुसार इसका पूर्ण कार्यान्वयन हो जाएगा। यह सुनिश्चित करने के लिए कि कोई भी वित्तीय फर्म 'असफल होने के लिए अत्यधिक बड़ा' न हो तथा करदाताओं को संकल्प की लागत न वहन करनी पड़े, एफएसबी फ्रेमवर्क जिसमें प्रस्ताव पर्यवेक्षण, विदेशी सहयोग, वसूली और 2016 से प्रस्ताव नियोजन की पुष्टि की गई। एफएसबी ने वैश्विक रूप से सुव्यवस्थित रूप से महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थानों (जी-सिफी) की प्रारंभिक सूची और आभासी बैंकिंग संबंधी दिशानिर्देश तैयार करने की पांच भाग वाली कार्ययोजना भी प्रकाशित कराई है। अत्यधिक जोखिम लेने को रोकने और अत्यधिक वेतन और बोनस को हतोत्साहित करने हेतु एफएसबी ने क्षतिपूर्ति संबंधी सिद्धांत और मानक तैयार किए हैं।

14.78 भारत बेसल बैंकिंग पर्यवेक्षण समिति (बीसीबीएस) समिति का सदस्य है और अंतरराष्ट्रीय विनियामक और पर्यवेक्षी फ्रेमवर्क के संकट पश्च सुधारों में सक्रियता से कार्य कर रहा है। भारतीय वित्तीय क्षेत्र पूर्णत: विनियमित है और भारत अंतरराष्ट्रीय मानकों और इसकी शर्तों के अनुसार अंशशोधित सर्वोत्तम पद्धतियों को अपनाने के लिए वचनबद्ध है। इस प्रकार भारत के बैंक पूर्णत: पूंजीकृत हैं और आशा की जाती है कि बेसल III मानकों की वजह से बैंकिंग प्रणाली पर कुल मिलाकर अनुचित दबाव पड़ने की संभावना नहीं है। भारत ने कुछ प्रतिचक्रीय नीतियां जैसे प्रावधान मानक और विभेदक जोखिम भार (उधार के लिए स्थावर संपदा क्षेत्र, पूंजी बाजारों और वैयक्तिक ऋणों के लिए) का कार्यान्वयन जोखिमों में बढ़ोतरी पर नियंत्रण रखने हेतु इनके अंतरराष्ट्रीय रूप से प्रस्तावित किए जाने के पहले ही कार्यान्वित किया था।

14.79 तथापि, कई देशों में उभरते विनियमन मानकों के कार्यान्वयन पर कुछ निषेध हैं। कई देशों में वित्तीय क्षेत्र के अपने विनिर्देशन हैं और बाजार के अनेक भागीदारों से परिवर्तन हेतु प्रतिरोध की संभावना को देखते हुए यह देखा जाना बाकी है कि क्या ये सुधार सभी देशों में किए जाएंगे और क्या इनमें कमी नहीं आएगी। जहां सभी जी-20 देश बेसल III का कार्यान्वयन करने के लिए वचनबद्ध हैं, वहीं प्रमुख अधिकार क्षेत्र पृथक रूप से अपने विनियामक मानकों के साथ प्रकट हो गए हैं: संयुक्त राज्य अमरीका में डॉड फ्रैंक अधिनियम और यू के में विकर्स कमीशन सिफारिशें (देखें बॉक्स 14.3)

बॉक्स 14.3 : वित्तीय विनियमन: नई पहल-अमरीका और यूके

अमरीका-डॉड फ्रैंक अधिनियम: वर्ष 2007-10 के वित्तीय संकट से विनियामक प्रणाली में परिवर्तन हेतु मांग उठी। जून 2009 में अमरीका में वित्तीय विनियामक प्रणाली के व्यापक पुन: चिंतन के लिए प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया जो आगे चल कर जुलाई, 2010 में 'बॉल स्ट्रीट सुधार और उपभोक्ता सुरक्षा अधिनियम (इसे डॉड फ्रैंक अधिनियम भी कहा जाता है) नामक विधान के रूप में परिवर्तित हुआ। यह वित्तीय बाजारों (व्यूत्पन्न बाजारों सहित) विनियामक एजेन्सियों का समेकन और प्रणालीगत जोखिम का मूल्यांकन करने के लिए 'वित्तीय स्थिरता निरीक्षण परिषद' नामक नए निरीक्षण परिषद की स्थापना के व्यापक विनियमन हेतु एक विशाल और ओवरआर्चिंग अधिनियम (1601 धाराएं) हैं। इन प्रावधानों का उद्देश्य 'आर्थिक सहायता के लिए अत्यधिक विशाल' समस्या का समाधान तथा ऐसी बड़ी कॉम्पलेक्स वित्तीय कम्पनियां जिन्होंने अपनी क्रमबद्ध कामबंदी की योजनाएं प्रस्तुत की हैं कि आवश्यकता प्रस्तुत करना है। इसका आशय यह है कि बड़ी अन्त: संबद्ध वित्तीय कम्पनियों के परिसमापन से होने वाली लागत का भारत करदाताओं पर नहीं पड़ेगा। यह अधिनियम उन नियमों को समावेश करता है जिन्हें 'वॉल्कर नियम' कहा गया है जिनके द्वारा निक्षेपागार बैंकों को स्वाम्य कारोबार से निषेध किया जाएगा। (ग्लास-स्टीगल अधिनियम में संयुक्त निवेश और वाणिज्यिक बैंकिंग के निषेध के सदृश)। इस अधिनियम में हेज फंडों और क्रेडिट रेटिंग एजेन्सियों के विनियमन हेतु उन्नत मानक, उन्नत लेखक मानक, निवेशक सुरक्षा और कार्यकारी क्षतिपूर्ति के मानक शामिल हैं। जैसाकि अधिनियम के शीर्षक में सुझाया गया है इसमें उपभोक्ता संरक्षण सुधार और नए उपभोक्ता संरक्षण ब्यूरो की स्थापना तथा संघीय बैंकिंग प्रतिभूति विनियामक एजेन्सियों के रूप में अल्पसंख्यक और महिला समावेशन के नए कार्यालय हेतु प्रावधान है।

यूके: विकर्स आयोग की रिपोर्ट:

सर जॉन विकर्स के अंतर्गत बैंकिंग संबंधी स्वतंत्र आयोग ने सितम्बर 2011 को यूके सरकार को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। रिपोर्ट के प्रारंभ में यह तर्क है कि वैश्विक संकट के दौरान बैंकों के असफल होने के मुख्य कारणों में एक कारण यह था कि जोखिम के संबंध में उनके पास बहुत अल्प इक्विटी थी। लीवरेज पर कम प्रतिबंध थे। 'जोखिम भारित' परिसंपत्तियों में निर्धारित महत्व अविश्वसनीय हो गया। इक्विटी में कमी से शोध क्षमता और संक्रामक रोग जैसी समस्याएं उत्पन्न हो गईं। हालांकि बैंकिंग प्रणाली में जोखिम का प्रभाव कहीं और होना चाहिए न कि करदाताओं पर। **ढांचागत पृथक्करण और रिंग फेंसिंग:** मुख्य सिफारिश यह है कि रिटेल बैंकिंग और होलसेल/निवेश बैंकिंग के बीच ढांचागत पृथक्कीकरण होना चाहिए। उन बैंकिंग कार्यकलापों को अलग करने के लिए रिंगफेन्स होना चाहिए जहां निरंतर सेवा मुहैया कराना अर्थव्यवस्था और बैक ग्राहकों के लिए महत्वपूर्ण है। घरेलू रिटेल बैंकिंग रिंग फेन्स के भीतर होना चाहिए। यदि यूरोपीय आर्थिक क्षेत्र में ग्राहकों को भुगतान सेवाएं प्रदान करना महत्वपूर्ण नहीं हो, तो सेवाएं रिंग फेन्स के भीतर से मुहैया नहीं कराई जानी चाहिए। रिटेल और निवेश कार्यकलाप वाले बैंकों को इन कार्यकलापों को जानबूझकर अलग-अलग रखे जाने की आवश्यकता होगी परन्तु वे सूचना, अवसंरचना आदि का साथ-साथ इस्तेमाल कर सकते हैं। ढांचागत पृथक्कीकरण से यूके को एक उत्कृष्ट अंतरराष्ट्रीय वित्तीय केन्द्र के रूप में अपनी स्थिति बनाए रखने में सहायता मिलेगी, जबकि यूके बैंकिंग को अधिक लचीला बनाया गया है। **हानि की अवशोषकता:** यह रिपोर्ट बेसल III के निर्देश के ठीक अनुसार है परन्तु चूंकि प्रणालीगत महत्वपूर्ण बैंकों के लिए लीवरेज की उच्चतम सीमा अत्यन्त शिथिल है और इसमें सिफारिश की गई है कि रिटेल बैकों के पास जोखिम-भारित परिसंपत्तियों को कम से कम 10 प्रतिशत की इक्विटी पूंजी होनी चाहिए।

आयोग ने यह भी सिफारिश की है कि वैयक्तिक और लघु एवं मध्यम उद्यमों के चालू खातों की पुनर्निर्देशन सेवा आरंभ होने से अन्य बातों के साथ, सात कार्यदिवसों में खातों का अंतरण किया जाएगा।

टिप्पणी: बॉक्स में दिया गया विवरण एक संक्षिप्त सिंहावलोकन मात्र है जो न तो सम्पूर्ण और न विवृत्ति है।

साथ ही यूरोपीय संघ के भी अपने नियम हैं। एक चिन्ता यह उभर रही है कि यदि सदृश मानक सभी अधिकार क्षेत्रों में एक साथ कार्यान्वित नहीं किए जाते हैं तो विनियामक विभाजन के लिए गुंजाइश हो सकती है जिसके परिणामस्वरूप वित्तीय क्रियाकलाप के कम विनियमित अधिकार क्षेत्रों में के साथ-साथ शेडो बैंकिंग में स्थानांतरण हो सकता है। निकट भविष्य में कुछ ऐसी भी चिंताएं है कि विगत समय से उन्नत-अर्थव्यवस्थाओं में वापसी करते समय विनियामक मानकों को सख्त किए जाने से निरंतर चल रहा संकट समाप्त नहीं हुआ है और इससे बैंक जोखिम प्रतिकूल बन सकते हैं तथा फलस्वरूप वित्तीय मध्यथता और स्थावर संपदा को ऋण प्राप्ति में प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

14.80 विकास मुद्दे: जी-20 विकास एजेन्डे में सियोल शिखर सम्मेलन में घोषित नौ स्तंभों पर आधारित बहुवर्षीय कार्य योजना शामिल है जिसमें से फ्रांस महाप्रांत द्वारा कान शिखर सम्मेलन के लिए अवसंरचना और खाद्य सुरक्षा पर फोकस किया गया। अन्य स्तंभ है, मानव संसाधन विकास; व्यापार; निजी निवेश और नौकरी का सृजन; वित्तीय समावेशन; समुत्थान-शक्ति के साथ विकास; ज्ञान का आदान-प्रदान और घरेलू संसाधन संग्रहण। इनमें से कई मुद्दों को कई विकासात्मक एजेन्सियों के विषय क्षेत्र में रखा गया है।

14.81 जहां भारत ने देश विशिष्ट दशाओं के अनुरूप विकास संबंधी मुद्दों को उच्च प्राथमिकता दी है वहीं एक मुद्दा जो प्राथमिकता योग्य है वह अवसरंचना निवेश हेतु वैश्विक बचतों का पुनर्चक्रण है। उभरती अर्थव्यवस्थाओं और विकासशील देशों में अवसरंचना निवेश के संवर्धन से वैश्विक मांग के पुन: संतुलन तथा पुनरुजीवन और विकास बनाए

रखने के लिए भी सकारात्मक निहितार्थ होगा। साथ ही अधिक बचतों का उत्पादनकारी उपयोग होगा।

14.82 कान शिखर सम्मेलन: नवम्बर 2011 तक कान में जी-20 शिखर सम्मेलन से ठीक पहले वैश्विक अर्थव्यवस्था में कमजोर वापसी और वित्तीय स्थिरता की बढ़ते जोखिमों के साथ एक कठिन चरण आया। जी-20 वार्ताओं के ठीक पहले यूरो जोन सरकारी ऋण संकट अत्यधिक अस्पष्ट दिखाई पड़ा। अपेक्षाकृत छोटी अर्थव्यवस्थाओं की समस्याएं वैश्विक वित्तीय बाजारों में स्थानांतरित हो गई और परिणामस्वरूप सुरक्षा की खोज होने लगी। यूरो जोन संकट का प्रस्ताव 2011 में सामने आया। वैश्विक अर्थिक एजेन्डे में हालांकि जी-20 के इस मामले में प्रत्यक्ष भूमिका न होने के बावजूद महत्वपूर्ण भूमिका रही। साथ ही विकास की कमी और अधिक बेरोजगारी को देखते हुए 'विकास और नौकरियां' पर कान कार्य योजना का फोकस रहा।

14.83 विकास और नौकरियों के लिए कान कार्य योजना: शिखर सम्मेलन में घोषित कार्य योजना में बहुपक्षीय सहयोग का उत्साह जो एमएपी के केन्द्र में हैं, के प्रति नेताओं की वचनबद्धताओं की ओर पुन: याद दिलाया गया। तैयार किए गए प्रमुख नीति कार्यों में 26 अक्तूबर 2011 को यूरो ज़ोन नेताओं द्वारा घोषित उपायों के त्वरित कार्यान्वयन के शीघ्र निपटाए जाने वाले कार्य शामिल हैं। जी-20 में अधिक स्थिर और लचीले आईएमए के संबंध में महत्वपूर्ण कदम उठाए जाने की वचनबद्धता की गई और वित्तीय विनियमन का सुदृढ़ीकरण जारी रखने की सहमति हुई। मध्यावधि नीति आदेशों के तहत जी-20 नेताओं ने सदस्यों द्वारा किए गए उन नीति कार्यों का अनुमोदन किया जिनका उद्देश्य मध्यावधि में असंतुलनों को दूर करना और सुदृढ़, स्थायी और संतुलित विकास हेतु प्रगति सुनिश्चित करना है। उन्होंने अधिक बेरोजगारी और अपर्याप्त सामाजिक सुरक्षा व्यवस्थाओं सहित सामाजिक मुद्दों पर दबाव बनाने के बड़े संकल्प के साथ कार्य करने की कान कार्य योजना में क्षमता निर्माण सहायता और अवसंरचना विकास सहित विकासशील देशों में विकास-वर्धन निवेशों के लिए अधिशेष बचतों के सरलीकरण के और अधिक प्रयास की आवश्यकता पर भी ज़ोर दिया गया है तथा जी-20 द्वारा स्थापित अवंसरचना पर उच्च स्तरीय पैनल की सिफारिशों का स्वागत किया गया है।

14.84 **वर्ष 2012 में जी-20 एजेन्डा:** चूंकि मेक्सिको ने कान शिखर सम्मेलन के पश्चात् जी-20 की अध्यक्षता हासिल कर ली है और जी-20 एजेन्डे की सामरिक झलक जारी की है जिसमें निम्नलिखित प्राथमिकताओं की व्याख्या की गई है।

1) विकास और रोजगार के रूप में आर्थिक स्थिरता और ढांचात्मक सुधार।

2) वित्तीय प्रणाली का सुदृढ़ीकरण और विकास को बढ़ावा देने हेतु वित्तीय समावेशन को प्रोत्साहित करना।

3) परस्पर संबद्ध विश्व में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ढांचे में सुधार लाना।

4) खाद्य सुरक्षा में बढ़ोत्तरी करना और वस्तुओं की कीमत की अस्थिरता का समाधान करना।

5) जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध संघर्ष में स्थायी विकास और हरित विकास को बढ़ावा देना।

14.85 **विकास में वित्त की भूमिका:** जहां एक ओर वैश्विक मंत्र जैसे, जी-20 और अंतरराष्ट्रीय विनियामक निकायों ने वित्तीय विनियम संबंधी मुद्दों पर वार्ता जारी रखी, वहीं वर्ष 2011 में पूरे विश्व में यह चिंता बढ़ती गई कि वास्तविक अर्थव्यवस्था के हितों को पूरा करने में 'वित्त-साधन' पर्याप्त नहीं है तथा विभिन्न विनियामक और क्षतिपूर्ति व्यवस्थाएं शेष अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं हैं।

14.86 वित्तीय क्षेत्र में क्षतिपूर्ति का मुद्दा न केवल जी-20 बल्कि आमतौर पर मीडिया में भी बहस का प्रमुख स्रोत है। इसी प्रकार, जिंसें और सट्टेबाजी के वित्तपोषण का मुद्दा जिससे जिंस मूल्यों में अस्थिरता हो रही है तथा वित्तीय लेन-देनों पर कर लगाने का विचार विवाद के मुद्दे बन गए हैं जिन पर कोई स्पष्ट आम राय नहीं बन पाई है। हाल में गंभीर शैक्षणिक अवसंधानकर्ताओं में भी एक चिंता का क्षेत्र यह रहा है कि क्या वित्तीय क्षेत्र कुछ विकसित अर्थव्यवस्थाओं में काफी बड़ा हो गया है तथा क्या इसका मूल्य वर्धन वस्तुत: वास्तविक है और सही-सही मापा गया है।

14.87 इस बात का ख्याल रखे बिना कि क्या ये दृष्टिकोण और अवशोधन सही है अथवा अनुचित, इन बहसों और चालू कार्य पर नीति में ध्यान रखे जाने की आवश्यकता है। सौभाग्य से भारतीय वित्तीय क्षेत्र और बैंक अब तक पूर्ण विनियमित है और यह सुनिश्चित करने हेतु कि यह स्थावर सम्पदा क्षेत्र के लिए उपयोगी हैं, एक नीति अनुपालन मामला है। इसके बावजूद, विकास में वित्त की भूमिका के महत्व को देखते हुए भारतीय विनियामक प्रणाली को सतर्क बनाए रखने और सुदृढ़ करने की भी आवश्यकता है जिससे कि यह सुनिश्चित हो सके कि वित्तीय क्षेत्र में मध्यस्थता प्रक्रिया में विकास से आर्थिक विकास और वित्तीय समावेशन को आगे बढ़ाना सुनिश्चित हो सके।

विश्व को नियोजित करना

14.88 हाल ही में प्रकाशित एक पुस्तक में यह नोट किया गया है कि भारत एक 'संकटपूर्ण दशक' में प्रवेश कर गया है। इसे अपने मुताबिक कई आर्थिक संकेत को विशेष कर विशाल घरेलू बाजार, सुदृढ़ सघउ-निवेश अनुपात और जनसंख्यिकीय लाभ का अनन्य लाभ प्राप्त है तथापि, इन सभी से लाभ प्राप्त किए जाने की आवश्यकता है। नि:संदेह भारत को अपनी अंतरिक चुनौतियों का सामना किए जाने की आवश्यकता है जिसमें गरीबी की पुरानी समस्या और इसके सामाजिक और भौतिक अवसंरचना का विकास शामिल है।

14.89 भारत के आकार और वैश्विक अर्थव्यवस्था में इसके प्रोफाइल को देखते हुए भारत को वैश्विक स्तर पर सक्रिय भूमिका न केवल उन वाद-विवादों में कि निरंतर चल रहे संकट को कैसे दूर किया जाए और भविष्य में इसी प्रकार के संकटों की पुनरावृत्ति को कैसे रोका जाए बल्कि वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए व्यापार, पूंजी प्रवाह, वित्तीय विनियमन; जलवायु परिवर्तन और वैश्विक वित्तीय संस्थाओं का अभिशासन जैसे ज्वलंत बृहत् आर्थिक मुद्दों पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

14.90 यह तर्क दिया जा सकता है तथा कुछ तरीकों में यह आसान विकल्प हो सकता है कि भारत को वर्तमान संघर्षपूर्ण वैश्विक बहस में निष्क्रिय मुद्रा अपनानी चाहिए और संकट की अवधि तक प्रतीक्षा करनी चाहिए। परन्तु यह विकल्प वास्तविक रूप में अब संभव नहीं है। यह पहले से ही वैश्विक अर्थव्यवस्था और राजशासन का भाग है, अत: विश्व में हो रहे घटनाक्रमों से भारत पर गहरा प्रभाव पड़ेगा और भारत जो भी करेगा उससे विश्व प्रभावित होगा। इसलिए भारत के लिए यह आवश्यक है कि वह कार्यों और विचारों से विश्व के समक्ष अपना तालमेल स्थापित करे।